विषय-सूची

nted by G. G. Pathare at the Popular Printing Press, 35, Tardeo ad. Bombay 7, and published by Utsav Parikh, Nalanda olications Company, Race Course Road, Baroda. Baroda, Government Order No. (D)49/43: 1-11-47

समर्पण

ग्राम-जीवन और ग्राम-संकृति

के

अमर उपासक,

ग्रामोद्योगों के अनुपम जीवनदाता

और

ग्राम गण-तंत्र के महान् पुजारी

राष्ट्रपिता पूज्य बापूजी

की

दिवंगत आत्मा

को

श्रद्धापूर्वक समर्पित

प्रवचन

विशेष रूप से भारत में ग्राम स्वराज्य जनता का राज्य है। क्यों कि भारतवर्ष ग्रामों का देश है। इसके अतिरिक्त ग्राम स्वराज्य ही सच्चे जनता के राज्य की स्थायी नींव डाल सकता है।

श्री यादवेन्दु जी की पुस्तक जनता का ध्यान इस महत्वपूर्ण प्रश्न की ओर दिलाती है। पुस्तक उपादेय और पठनीय है। मुझे आशा और विश्वास है कि पुस्तक प्रेमी इसे सहर्ष अपनायेंगे।

श्रीकृष्णदत्त पालीवाल
राजस्व तथा सूचना सचिव
संयुक्त प्रान्तीय सरकार

लखनऊ
२७ मई १९४८ ई.

भूमिका

भारतवर्ष कृषकों का देश है। यहां की ८० प्रतिशत जनता ग्रामों में रहती है; शेष २० प्रतिशत जनता नगरों में रहती है। इसलिए भारत की स्वाधीनता का अर्थ होना चाहिए ग्रामों में रहने वाली जनता की राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्वाधीनता।

विश्व-वंद्य, शोषित-पीड़ित जनता के प्राण महात्मा गांधी ने सदैव किसानों की स्वाधीनता के लिए प्रयत्न किया और अन्त में वे ज़मींदारी-प्रथा के उठा देने के पक्ष में भी होगए थे। गांधी जी ने अपने एक लेख में स्पष्ट शब्दों में किसानों के अधिकारों की चर्चा के संबंध में लिखा है:—

"मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि यदि हमने लोकतंत्र-स्वराज्य की स्थापना की;, और यदि यह स्वाधीनता अहिंसा द्वारा प्राप्त की गई, आशा है कि ऐसा ही होगा, तो उसके प्रत्येक क्षेत्र में किसानों के हाथों में सत्ता-जिसमें राजसत्ता भी समिलिति है—होनी चाहिए।"[1]

१६ अगस्त १९४७ को प्रातःकाल ९ बजे दिल्ली के लाल क़िले पर राष्ट्रीय ध्वजारोहण करते समय भारतीय संघ के प्रधान-मंत्री माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरु ने भी महात्मा जी के इस विचार की पुष्टि करते हुए अपने भाषण में कहा है:—

"भारतीय संघ के ३० करोड़ व्यक्तियों में से प्रत्येक एक राजा है क्यों कि उन्होंने जिसकी प्राप्ति की है, वह प्रजा-राज्य ही है। परन्तु इसका प्रयोजन यह नहीं कि वे चाहें जो करें। उन्हे अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा ही कार्य करना चाहिए और क़ानून का पालन करना चाहिए। दिल्ली में बहुत-से राजा महाराजा होगये हैं; परन्तु अब राजाओं का युग बीत चुका। यह युग पंचायत-राज का है।"[2]

माननीय पंडित जी के शब्दों में यह युग 'पंचायत-राज्य' का है। इन विचारों और सद् भावनाओं को कार्य रूप में परिणत करने से ही भारत में सच्चे स्वराज्य और सुराज्य दोनों की स्थापना हो सकेगी।

---

1. M. K. Gandhi: India of My Dreams (1947) p. 103.
   (Hind Kitabs, Bombay).
2. Pandit Jawaharlal Nehru's Speech on 16-8-47.

प्रान्तीय सरकारों ने इस दिशा में पग बढ़ाया है और ग्रामों में स्वराज्य अर्थात् पंचायती-राज्य क़ायम करने के लिये व्यवस्था की है। संयुक्त प्रान्त की सरकार इस दिशा में अग्रगण्य है। उसने गत वर्ष ही पंचायती राज्य-क़ानून स्वीकार कर २७-दिसंबर १९४७ से प्रान्त में लागू कर दिया है। आशा है, कि अन्य प्रान्तों में भी शीघ्र ही इस प्रकार के पंचायती राज्य की प्रतिष्ठा की जायगी।

हमारे मतानुसार तो किसानों को सच्चा स्वराज्य उसी समय मिलेगा जब कि भारत से ज़मींदारी-प्रथा का समूल नाश करके कृषि-भूमि को किसानों में और विशेष रूप से भूमि-हीन कृषकों (Landless agriculturists) में विभाजित कर दिया जायगा। यदि इस भूमि को सहकारी समितियों को दे दिया जाय और किसान सहकारी ढंग से उसे जोतें बोयें तब ही वे वास्तव में अपनी जीविका के प्रश्न को हल कर सकेंगे। यू. पी., सी. पी., विहार, तथा मद्रास आदि की सरकारें ज़मींदारी को उठा देने के लिये उपाय सोच रही हैं, उनकी कमेटियां विचार कर रही हैं।

इसके बाद किसानों को, महात्माजी के आदेशानुसार, राज्य-शासन के प्रत्येक भाग में हिस्सा देने की योजना तैयार की जाय। आज हम देखते हैं कि किसानों की न तो कृषि-संबंधी किसी राज्य-समिति में कोई आवाज़ है, न उनका ज़िला-बोर्ड अथवा प्रान्तीय शासन-प्रबंध में कोई प्रभाव है और न भारत की केन्द्रीय शासन-व्यवस्था में ही।

हमारा यह विचार है कि जबतक किसान और मज़दूर वर्गों के शिक्षित और विद्वान नेता राष्ट्र एवं राज्य की राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था में सक्रिय भाग नहीं लेंगे तब तक देश की न तो दरिद्रता दूर होगी और न सच्चा स्वराज्य ही स्थापित होगा।

आज जो भी नेता किसान-मज़दूरों के वर्ग का नेतृत्व कर रहे हैं, वे उन वर्गों में न उत्पन्न हुए, न उनके वातावरण में पालन-पोषण हुआ और न उनकी अभाव-आवश्यकताओं का उन्होंने प्रत्यक्ष अनुभव ही किया, तब उनसे यह आशा करना कि वे सच्चे भाव में किसान-मज़दूरों का नेतृत्व कर सकेंगे, उनसे अधिक की मांग करना है, उनसे ऐसी मांग करना है, जो मनोविज्ञान

के प्रतिकूल और विश्व के इतिहास की व्याख्या के विरुद्ध है।

अतः किसान-मज़दूर वर्ग को, यदि भारत में सच्चा प्रजा-राज्य स्थापित करना है, तो उन्हें अपने वर्ग में दार्शनिक, विद्वान, शिक्षक और राजनीतिज्ञ पैदा करने चाहिए, जो भविष्य में भारत में सच्चा पंचायती राज्य क़ायम कर सकें।

मैंने इसी पुनीत भावना से यह पुस्तक लिखी है। यदि ग्राम-वासी जनता ने इस पुस्तक का इसी भाव से अवलोकन किया और वे अपने-अपने ग्राम में इसके विचारों का प्रसार करने में सहायक हुए, तो लेखक अपने इस परिश्रम को सफल समझेगा।

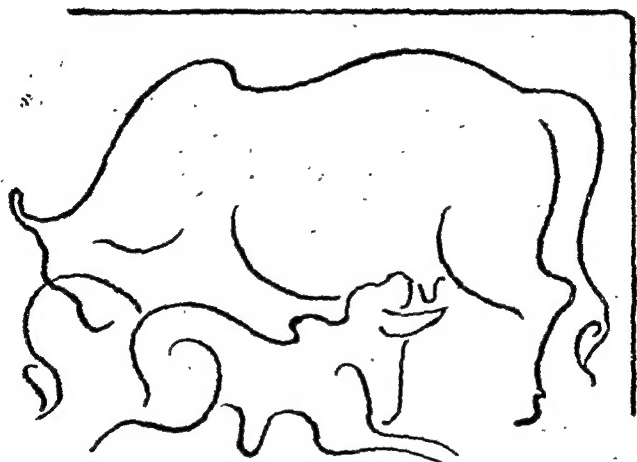
इस पुस्तक में ग्राम-स्वराज्य का विवेचन इस प्रकार किया गया है कि इससे सभी प्रान्तों में लाभ उठाया जा सके। लेकिन जहां-तहां संयुक्त प्रान्त के पंचायत-राज-विधान की चर्चा की गई है और उसकी रचनात्मक आलोचना भी। कृषि-भूमि का राष्ट्रीयकरण किया जाय अथवा प्रत्येक किसान भूमि का मालिक हो, इस संबंध में अभी तक राष्ट्रीय महसभा तथा राष्ट्रीय सरकारों ने अपनी नीति स्पष्ट नहीं की है। यद्यपि ज़मींदारी की प्रथा को उठादेने का निश्चय किया जा चुका है; परन्तु उसके बाद भूमि-संबंधी नीति क्या होगी, इसका ठीक प्रकार से निश्चय होजाना आवश्यक है।

भूमि-संबंधी प्रश्न विवाद-ग्रस्त है और इसका देश की आर्थिक नीति से गहरा संबंध है। इसी कारण हमने इस प्रसंग पर प्रकाश नहीं डाला है। हम इस पुस्तक को वाद-विवाद का विषय न बना कर सर्वसाधारण के लिए उपयोगी और सरल बनाना चाहते थे और इसी लिए इन विवादग्रस्त प्रश्नों की चर्चा नहीं की गई है।

अन्त में हम इस पुस्तक के प्रकाशक महानुभाव को हार्दिक धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकते, जिन्होंने इसे सुन्दर ढंग से मुद्रित करा कर आपके लिए सुलभ बना दिया है।

राजामंडी
आगरा (यू. पी.)
२१ मार्च १९४८ ई.

—रामनारायण यादवेन्दु



Who can deny the birthright

१

प्राचीन कालमें ग्राम–संस्था

आर्य–जीवन और संस्कृति में ग्राम-संस्था का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। वैदिक युग में ग्राम सभाऐं ही शासन-व्यवस्था का आधार स्तंभ थीं उसके वाद ऐतिहासिक युग में भी ग्राम-संस्थाओं का सार्वजनिक जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान रहा। आर्य संस्कृति एवं सभ्यता का ग्रामों तथा ग्राम-संस्था से इतना घनिष्ट संबंध था कि ग्राम-संस्था के अभाव में हम वैदिक समाज के स्वरुप की स्पष्ट रूप से कल्पना भी नहीं कर सकते।

ग्राम की उत्पत्ति

ग्राम-संस्था का इतिहास इतना ही प्राचीन है, जितनी कि वैदिक सभ्यता। ऋग्वेद में ग्राम-सभा का वर्णन मिलता है। उसके वाद स्मृति-ग्रन्थों में इस संबंध में विस्तार-पूर्वक विवेचन किया गया है। महाभारत तथा रामायण और मौर्य–कालीन कौटिल्य के ' अर्थशास्त्र ' में ग्राम-व्यवस्था पर प्रकाश डाला गया है। 959

वैदिक काल में समाज-संघटन 'विशः' और 'जन' के आधार पर खड़ा किया गया था। प्रोफेसर जयचंद्र विद्यालंकार के अनुसार प्रारंभिक युग में समाज का संघठन 'कबीलों' के रूप में था। इन 'कबीलों' को वे लोग 'जन' कहते थे। एक 'जन' की समूची जनता 'विशः' कहलाती थी। प्रत्येक 'जन' में अनेक दल होते थे, जो ग्राम कहलाते थे। ग्राम का अर्थ जत्था या टुकड़ी था। बाद में ग्राम जिस स्थान में बस गया, वह स्थान भी ग्राम कहलाने लगा। परन्तु आरंभ में ग्राम में स्थान का विचार नहीं था; अनवास्थित ग्राम भी होते थे। वैदिक वाङ्मय में शर्याति मानव के अपने ग्राम के साथ भटकते फिरने की कहानी प्रसिद्ध है।[1]

श्री. डा. एच. एन. सिन्हा का मत इससे भिन्न है। वैदिक काल में राष्ट्र की उत्पत्ति का विवेचन करते हुए उन्होंने लिखा है कि राष्ट्र की—एक राजनीतिक संस्था के रुप में—उत्पत्ति विनाश शील कबीलों के संघठन का विघटन एवं ग्राम संस्था के उदय के कारण ही हुई। जिस प्रकार यह कहना कठिन है कि राष्ट्र एक जातीय 'जन' के संघठन का नाम था अथवा अनेक जातीय 'जनों' के समूह का, उसी प्रकार यह कहना भी कठिन है कि ग्राम में एक विशः सम्मिलित था या अनेक। परन्तु यदि यह निश्चय होजाय कि ग्राम एक नवीन संस्था थी जो 'विशः' पर ऊपर से प्रतिष्ठित कर दी गई थी और वह राजनीतिक थी, तब राष्ट्र के राजनीतिक स्वरूप का निश्चय सहज ही होजायगा। क्यों कि राष्ट्र ग्रामों के विकास का ही परिणाम था।[2]

ऋग्वेद-में ग्राम का अनेक बार वर्णन मिलता है। उसका जनता के निवास के रूप में प्रयोग किया गया है। आरंभ में ग्राम एक ही वंश के लोगों के निवास स्थान रहे होंगे; परन्तु कालान्तर में अनेक वंशों के लोक उनमें रहने लगे।

---

१ श्री जयचंद्र विद्यालंकार कृत 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा' (प्रथम भाग) पृ. १७९

2. H. N. Sinha: Sovereignty in Ancient Indian Polity ((1938) Luyac & Co., London. p. 15.

जनता का विचारशील भाग देवी–देवताओं की आराधना में लीन रहता था, जो सैनिक मनोवृति के थे, उन्होंने ग्राम-रक्षा का भार ग्रहण किया, अन्य लोगों ने कृषि–उद्योग को ग्रहण किया और विजित लोगों ने दास–वृति ग्रहण की।

ग्रामोद्योग

ग्रामों के स्थायी रूप से भूमि के विशेष भागों पर बस जाने के बाद आर्य सभ्यता का उदय हुआ। कृषि, गोपालन, तथा अन्य ग्रामोद्योगों का विकास इसी समय से आरम्भ हुआ। आरम्भ में जन कृषि–कर्म द्वारा अपनी जीविका प्राप्त करते थे। परन्तु जब कृषि का पर्याप्त विकास होने लगा तो उसके साथ–साथ ग्रामों में अन्य उद्योग धंधों का भी विकास होने लगा। पशु-पालन, लुहार, सुतार, राज – मिस्त्री, तेली, मोची, कुम्हार, सुनार, ग्वाले आदि प्रत्येक ग्राम की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पैदा हो गए। धुनिये, रंगरेज, कनैये तथा दूकान-दार आदि भी प्रत्येक ग्राम में अपना अपना काम करने लगे। एक ही ग्राम में कृषि–कर्म करने वाले रहते और उसी में चर्खा चलाने वाले, कपड़ा बुनने वाले, लुहार, सुतार, मोची, बढ़ई, राज-मिस्त्री आदि सब रहते थे। इस प्रकार ग्राम स्वावलम्बी थे। वे एक दूसरे से स्वतंत्र और स्वाश्रय थे।

ग्राम-सभा

जब एक ही ग्राम में विविधि उद्योग धंधों के आधार पर ' जन 'विभाजित होगए–अनेक श्रेणियां पैदा होगई, तब उन्हें एक सूत्र में ग्रंथित करने के उद्देश्य से ग्राम के संगठन के लिए एक संस्था की आवश्यकता अनुभव हुई। ग्राम में विविधि व्यवसायों के करने वाले लोगों के परस्पर हितों में सामजस्य एवं एकता स्थापित करने के लिए ' ग्राम-सभा ' की स्थापना की गई। इस प्रकार ग्राम–सभाऐं समस्त आर्य राष्ट्र में जनता के लिए लोक हितकारी कार्य करने में लीन रहती थीं इससे आर्यों के प्रजातंत्र (Democracy) के उच्च आदर्श का परिचय मिलता है।

इन ग्राम–सभाओं में ग्राम–संबंधी सभी सार्वजनिक मामलों व प्रश्नों पर विचार किया जाता था। वे पारस्परिक विवादों के निर्णय के लिए न्याय–पंचा-

यतों का भी कार्य करती थीं। इन सभाओं में ग्राम के विद्वान लोग सदस्य होते थे। ग्राम्यवादित सभा का अध्यक्ष होता था। ग्राम-सभा भवन का नाम 'नरिष्ठा' कहलाता था। जब सभा का अधिवेशन नहीं होता था, तब सभा भवन का लोग आधुनिक क्लब के रूप में प्रयोग करते थे। ग्राम-सभा कृषि भूमि तथा भूमि-कर का प्रबंध करती थीं। क्यों कि राज्य-कोष में कर जमा करना उसी का कर्तव्य था। इस प्रकार राष्ट्र के ये अंग छोटे छोटे प्रजातंत्र (Republics) थे, जो राष्ट्र के अन्तर्गत रहते हुए भी स्वायत्त-शासित प्रजातंत्र थे।

वैदिक राज्य का आदर्श

ग्राम के सुप्रबंध के लिए ग्राम-सभा का जन्म हुआ और अनेक ग्रामों के समूह से राष्ट्र की उत्पत्ति हुई।

वैदिक युगमें राजा राष्ट्र का शासक होता था। परन्तु 'राष्ट्र-सभा' राजा का निर्वाचन करती थी। ऋग्वेद में यह उल्लेख मिलता है कि विशः राजा का चुनाव करते हैं।[३] अथर्व वेद के अनुसार राजकृतः और ग्रामीण राजा का निर्वाचन करते हैं।[४] ऋग्वेद में निम्न लिखित स्वराज्य-सूक्तों में वैदिक राज्य के आदर्श की स्पष्ट झलक मिलती है:—

स त्वाम दद् वृषा मदः सोम शोनाभृतः सुतः।
येना वृत्रं निरदभ्यो जधन्य वज्रिन्नोज सचिन्ननु स्वराज्यम्॥ २॥
विते वज्रासो अस्थिर भर्वात नाका अनु।
महत इन्द्र वीर्यं वाह्वास्ते वल हितमर्य मनु स्वराज्यम्॥ ८॥

ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त ८०

"हे वज्र धारिन सभाध्यक्ष! जिस न्याय-सुख-वर्धक सोम के द्वारा अपनी शक्ति के अनुसार स्वराज्य-शासन के अनुकूल प्रजाओं का पालन करता हुआ तू जल समान प्रजाओं से मेघ समान कर को पूर्णतया प्राप्त करता है। अथवा राष्ट्ररूप अन्तरिक्ष से अज्ञान शत्रुरूप वृत्र को सर्वथा नाश करता है।

---

३ ऋग्वेद १०-१२४८

४ अथर्व वेद ३-५,७

वह न्याय-सुख की वर्षा करनेवाला आनन्ददायक ज्ञानियों से प्राप्त कराया गया अच्छी प्रकार साध्य हुआ ज्ञान, ऐश्वर्य अथवा कर तुझे हर्षित करता है।"

"हे राजन्! स्वराज्यानुकूल आचरण करने से तेरा शत्रु-वारण सामर्थ्य महान् है और तेरी भुजाओं में प्रजारक्षण शक्ति रखी है। अतः तेरे वज्र नदियों आदि के अनुकूल विशेष रूप से स्थिर हों।"

इससे स्पष्ट है कि वैदिक काल में 'स्वराज्य' का आदर्श प्रतिष्ठित था। राजा होते हुए भी राज्य में प्रजातंत्र अथवा पंचायती राज्य था। स्वर्गीय डा० काशी प्रसाद जायसवाल ने अपनी खोजपूर्ण पुस्तक 'हिन्दू-राजतंत्र' में स्पष्ट रूप से यह सिद्ध किया है कि वैदिक युग में प्रजातंत्र राज्य था।

ग्राम-सभाओं के संबंध में सर जार्ज वर्ड वुड का यह मत है कि "भारतवर्ष में जितनी धार्मिक एवं राजनीतिक क्रान्तियां हुईं, उतनी संसार के किसी अन्य देश में नहीं हुई। परन्तु इस पर भी ग्राम—सभाओं की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वे उसी उत्साह और शक्ति के साथ काम करती रहीं।"

इसी संबंध में सर चार्ल्स मेटकाफ का कथन इस प्रकार है :—

"ग्राम-संस्थाएं छोटे छोटे जनतंत्र राज्यों का नाम था, जो कि अपने आप में पूर्ण थीं; जो कुछ भी उन्हें अपेक्षित था, वह उनमें निहित था; उनका अपने से बाह्य जगत के साथ संबंध कम ही था। ऐसा प्रतीत होता है कि जहां अन्य कुछ भी नहीं बचा, वहां वे बची रह गईं।"

आर्य संस्कृति एवं कला के महान् प्रशंसक श्री ई. बी. हैवल ने अपने ग्रन्थ में लिखा है :—

"ग्रेट ब्रिटेन की प्रजा ने पार्लमेण्टरी संस्थाओं तथा संसार की बहुमूल्य सम्पत्ति की सहायता से जिस ऐश्वर्य और स्वाधीनता का भोग किया, उसकी तुलना उस वैभव से नहीं की जासकती जो आर्यों ने ईसा से पांचवीं सदी पूर्व तथा उसके उपरान्त प्राप्त की थी, यह वह समय था. जिसे हम अंधकार युग कहते हैं। ग्राम समुदायों के आधार पर प्रजा की सर्वोत्तम बुद्धि ने जिस

भारतीय आर्य विधान की रचना की उससे कृषक केवल भूमि के स्वामी ही नहीं प्रत्युत उन्हें राज्य—शासन में सत्ता भी अधिक प्राप्त होगई।" [5]

ग्राम-संस्था पर कार्ल मार्क्स

साम्यवाद के महान आचार्य कार्ल मार्क्स के भारतीय ग्राम-संस्था के संबंध में क्या विचार हैं, यह जान लेना भी अत्यन्त आवश्यक है। कार्ल मार्क्स लिखते हैं:—

"ये छोटे और अत्यन्त प्राचीन भारतीय ग्राम समुदाय, जो आज पर्यन्त भी विद्य-मान हैं, भूमि पर सम्मिलित स्वाम्य, कृषि और ग्राम उद्योगों के सम्मिलित प्रयोग तथा अपरिवर्तनीय ग्राम विभाग पर स्थिर हैं, जो एक नूतन समुदाय के निर्माण के लिए एक योजना का काम देते हैं। १०० से कई हज़ार एकड़ तक की भूमि पर सम्मिलित कृषि की जाती है। पैदावार का एक बड़ा भाग ग्राम वासियों क उपभोग के लिए नियत कर दिया जाता है; उसे बाजार में बेचा नहीं जाता। अतः उत्पादन श्रम-विभाजन से मुक्त है जो समूचे भारतीय समाज में पण्य के विनिमय के कारण उत्पन्न हो गया है। इस प्रकार जो उत्पादन ग्रामवासियों की आवश्यकता पूर्ति के बाद अवशेष रह जाता है, वह, जबतक राज्य के कोष मे कर या लगान के रुप में नहीं पहुंच जाता, व्यापार वस्तु (Commodity) का रूप ग्रहण नहीं करता। भारत में इन ग्रामों का शासन-विधान विविध प्रकार का है। सबसे सामान्य और सरल विधान तो यह है कि भूमि सम्मिलित रुप से जोती-बोई जाती है और उत्पादन सब में विभाजित कर दिया जाता है। इसके साथ ही साथ प्रत्येक परिवार में सूत कातने तथा बुनाई का धंधा एक सहायक उद्योग के रूप में प्रचलित है। जनता को इस प्रकार हम एक ही कार्य या उद्योग में संलग्न पाते हैं। और उसमें से हो एक 'मुखिया' होता है, जो न्यायाधीश, पुलिस, तथा कर-संग्रह-कर्ता, इन तीनों का ही कार्य करता है। एक कृषि के संबंध में लेखा रखता है; एक अधिकारी फौजदारी के मामलों के चालान करता है; जो अपरिचित लोग यात्रा करते हैं,

5. E. B. Havell; History of Aryan Rule in India p. 235.

उनकी रक्षा करता है और दूसरे ग्राम तक उन्हें सुरक्षित रूप में पहुंचा देता है; सीमान्त-रक्षक, ग्राम की सीमाओं की रक्षा करता है; जलाधिकारी आवपाशी के लिए नहर या तालाब से जल-वितरण की व्यवस्था करता है; ब्राम्हण धार्मिक कृत्य करता है; अध्यापक, बालकों को खुले मैदान में लिखना-पढ़ना सिखलाता है। ज्योतिषी, कृषि के संबंध में शुभ मुहूर्त बतलाता है; लुहार और बढ़ई कृषि संबंधी औज़ारों की मरम्मत करते हैं; कुम्हार बर्तन आदि बनाते हैं। नाई केश-कर्त्तन करते हैं; धोबी वस्त्र साफ़ करते हैं। सुनार आभूषण बनाते हैं। इन सब लोगों का पालन पोषण समस्त ग्राम द्वारा किया जाता है। यदि ग्राम में जन-संख्या बढ़ जाती है, तो नव ग्राम की रचना की जाती है— ठीक उसी नमूने की। इस ग्राम-विधान की मशीनरी से एक सुव्यवस्थित ग्राम-विभाजन प्रकट होता है।......इन ग्राम संस्थाओं में उत्पादन-संघटन की सादगी एवं सरलता है, जो अनवरत रूप से, नष्ट हो जाने पर पुनः प्रादुर्भूत हो जाती है,— यह सरलता एशियायी समाजों की अपरिवर्तन शीलता के रहस्य की कुंजी है। समाज की आर्थिक व्यवस्था का ढांचा राजनीतिक उथल पुथल होने पर भी ज्यों का त्यों बना रहता है।"[६]

इस प्रकार हम इन प्राचीन ग्राम-संस्थाओं में स्वराज्य का वास्तविक रूप देखते हैं।

मौर्य्य-काल में ग्राम-संस्था

मौर्य्य-काल में शासन प्रबंध इतना श्रेष्ट और लोक हितकारी था कि भारतीय एवं पाश्चात्य सभी विद्वानों और इतिहास-कारों ने उसकी प्रशंसा की है। चाणक्य सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य्य के प्रधानामात्य थे। वह राजनीति तथा अर्थ-नीति के प्रकाण्ड पंडित थे। उनकी विश्व-विख्यात रचना 'अर्थशास्त्र' के नाम से प्रसिद्ध है। अर्थशास्त्र के अनुसार जनसंख्या के आधार पर ग्राम तीन वर्गों में रखे गए थे :- (१) श्रेष्ठ (२) मध्यम और (३) कनिष्ठ। राज्य-कर की दृष्टि से ग्राम चार भागों में विभाजित कर दिए गए :—

6. Karl Marx: Capital Vol. I. p. 391.

(१) ग्रामाग्र—(साधारण ग्राम)—इन पर राज्य-कर के साधारण नियम लागू थे।

(२) परिहारक-(राज्यकर से मुक्त)—इन ग्रामों से राज्य-कर नहीं लिया जाता था। ऋत्विक्, आचार्य, पुरोहित तथा श्रोत्रियों को बहुत-सी ऐसी ज़मीनें मुफ्त दे दी जाती थीं, जिनसे राज्य-कर नहीं लिया जाता था।

(३) आयुधीय-(यौद्धा-प्रधान ग्राम)-मौर्य्य-काल में ऐसे भी बहुत-से ग्राम थे जिनसे राज्य-कर कुछ भी नहीं लिया जाता था। परन्तु इन ग्रामों के निवासियों को युद्ध के समय सैनिक बनना पड़ता था।

(४) धान्य, पशु, सुवर्ण, वन्य-द्रव्य, स्वतंत्र श्रम आदि कर रूप में देने वाले ग्राम। इन ग्रामों से कर धन रूप में न लेकर धान्य आदि के रूप में लिया जाता था।

प्रत्येक ग्राम में एक ग्राम-सभा होती थी। इस सभा का जो अध्यक्ष होता था, वह राज्य की ओर से मुखिया माना जाता था। उस युग में जमींदारी की प्रथा नहीं थी। प्रत्येक कृषक अपनी भूमि का स्वामी था। प्रत्येक ग्राम में गोचर भूमि होती थी, जिसमें पशु चरते थे। ग्रामों की सीमाऐं बनी थीं और प्रत्येक ग्राम में एक सभा-भवन होता था। डा० प्राणनाथ विद्यालंकार ने मौर्य-काल की ग्राम-संस्था का वर्णन इस प्रकार किया है:—

"परदेश या स्वदेश के निवासियों द्वारा शून्य या नवीन जनपद को बसाया जाय। प्रत्येक ग्राम सौ परिवारों से पांच सौ परिवारों तक का हो। उसमें शूद्र कृषकों की संख्या अधिक हो और उनकी सीमा एक कोस से दो कोस तक विस्तृत हो। वह इस प्रकार स्थापित किए जायं कि एक दूसरे की रक्षा कर सकें। नदी, पहाड़, जंगल, पेड़, गुहा, नहर, तालाब, पीपल तथा बड़ आदि से उनकी सीमा नियत की जाय। आठ सौ ग्रामों के मध्य में स्थानीय, चार सौ ग्रामों के मध्य में द्रोणामुख, दो सौ ग्रामों के मध्य में खार्वटिक तथा दस ग्रामों के मध्य में सग्रंहण नामक दुर्ग बनाये जायं। राष्ट्र की सीमाओं पर अन्तपाल के दुर्ग खड़े किए जायं और प्रत्येक जनपद द्वारा

उसके द्वार सुरक्षित रखे जायं। वागुरिक, शवर, पुलिक, चाण्डाल तथा जंगली लोग शेष सम्पूर्ण सीमा की रक्षा करें।

ऋत्विक्, आचर्य, पुरोहित तथा श्रोत्रियों को अभिरूप फलदायक ब्रह्मदेश दिया जाय और उनको **राजदण्ड** और राज्यकर से मुक्त कर दिया जाय। अध्यक्ष, सख्यापक, गोप, स्थानिक अनीकस्थ, चिकित्सक, अश्व, दमक, जंघारिक आदि राज्य-सेवकों को भूमि दी जाय; परन्तु उन्हें यह अधिकार न हो कि वह उसे बेच सकें या थाती (गिरवी) रख सकें।

राजस्व देने वाले लोगों को ऐसे खेत दिये जायं, जो एक पुरुष के लिए पर्याप्त हों। **खेतिहरों का नई भूमि नहीं दी जाय।** जो खेती न करें, उनसे खेत छीन कर दूसरों को दे दिया जाय। ग्राम-भृतक या बनिये ही उन पर खेती करें। जो खेत जोतें, वे सरकारी हर्जाना भरें। जो सुगमता से राजस्व दें, उनको धान्य, पशु तथा हिरण्य से सहायता पहुंचाई जाय। साथ ही यह ख्याल रखा जाय कि अनुग्रह तथा परिहार से कोष की वृद्धि हो और जिससे कोष की हानि की संभावना हो, उसको न किया जाय। क्यों कि अल्प कोष वाला राजा नागरिकों तथा ग्रामीणों को ही सताता है। नये बन्दोबस्त या अन्य आकास्मिक समय में ही विशेष विशेष व्यक्तियों को राजस्व से मुक्त किया जाय। जिन लोगों का राज्यकर-मुक्ति या परिहार का समय समाप्त हो जाय, उन पर पिता के तुल्य अनुग्रह रखा जाय।"[७]

चाणक्य के अर्थ शास्त्र में ग्राम-संस्थाओं का जो विवेचन उपर्युक्त अवतरण में दिया गया है, उससे यह स्पष्ट है कि ग्राम संस्थाऐं पूर्णतः स्वायत्त-शासित सस्थाऐं थीं। इन ग्राम-सभाओं में ग्राम-वासियों के हितों से संबंधित प्रत्यक्ष

७, डॉ. प्राणनाथ विद्यालंकारः अर्थ शास्त्र पृ. ३९-४१

अनुग्रह : उत्तम काम करने के उपदक्ष्य में राजा किसानों व कारीगरों को जो पुरस्कार देता है, उसे अनुग्रह कहा गया है।

परिहार : राज्यकर से मुक्त करना। पुत्रोत्पीत, जन्म-दिवस आदि पर राजा ऐसा करते हैं।

विषय पर विचार किया जाता था। कृषि, व्यवसाय, रक्षा, आदि प्रश्नों के अतिरिक्त मनोरंजन, स्वास्थ्य एवं सांस्कृतिक समस्याओं पर भी विचार किया जाता था। प्रत्येक ग्राम का एक मुखिया होता था, जो ग्रामिक कहलता था।

ग्राम-सभाओं में बनाये गये नियम धर्म-स्थानीय न्यायालय में सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे। इसलिए चाणक्य ने लिखा है:—

"इस तरह देश-संघ, जाति-संघ, कुल-संघ जो समय (Agreement) करें, उसका उलंघन न किया जाय, यह बताया जाय।"

"अक्ष-पटल का अध्यक्ष, देश-संघ, ग्राम-संघ, जाति-संघ, और कुल-संघ के धर्म (Laws) व्यवहार, चरित्र, संस्थान आदि को पुस्तकों में सुरक्षित रखें।"

इन ग्राम-सभाओं में अपराधियों को दण्ड देने की भी व्यवस्था थी और ग्रामों की रक्षा का भार भी उन पर था।

गुप्त-काल के ग्राम

गुप्त-काल में ग्राम-सभाओं की क्या स्थिति थी, इसका प्रामाणिक विवरण हम स्वर्गीय विज्ञानाचार्य प्रो० रामदास गौड़ की पुस्तक " हमारे गावों की कहानी " से यहाँ प्रस्तुत करते हैं:—

" उस काल में भी पंचायतें बनी हुई थीं। किसानों की, कारीगरों की, कलावन्तों की, साहूकारों की, नटों की और सन्यासियों तक की पंचायतें संगठित थीं। इन पंचायतों के नियम बने हुये थे और वे सरकारी कानून के अन्तर्गत समझे जाते थे। उनके अधिकार और उनके नियम उस समय की सरकार मानती थी। जो लोग पंचायत के सदस्यों में फूट डालने के अपराधी होते थे, उन्हें सरकार की ओर से कड़ा दण्ड मिलता था। क्यों कि ऐसों को कड़ा दण्ड न दिया जायगा तो यह फूट की बीमारी महामारी की तरह महा भयानक रीति से फैल जायगी। याज्ञवल्क्य संहिता में लिखा है कि जो कोई पंचायत की चोरी करे या वचन तोड़े तो उसे देश निकाला दे दिया जाय। और उसकी सारी जायदाद ज़ब्त कर ली जाय। पंचायतों के पास पंचायती जायदाद भी होती थी और पंचायत के संघठन के नियम विस्तार से बने हुए

थे। परंतु नियमों के बनाने में यह बात बराबर ध्यान में रखी जाती थी कि उस समय के कानून से और धर्म-शास्त्र के नियमों से कोई विरोध न पड़े। पंचायतों की नियमवाली का नाम 'समय' था। और पचायत का काम करनेवाले 'कार्य-चिन्तक' कहलाते थे।

"पंचायत में जो लोग ईमानदार और पवित्र आचरण के समझे जाते थे वे ही कार्य-चिन्तक बनाये जाते थे और वे ही पंचायत के नाम से सरकारी दरबारों में काम करते थे। सरकार में उनका बड़ा मान-सम्मान होता था। पंचायत के सदस्यों पर भी उनका अधिकार था। उनके फैसले जो न माने, उन्हें वे दण्ड दे सकते थ।"

इसके बाद विक्रमी तेहरवीं शताब्दी तक भारत में ग्राम-संस्था का जो रुप विद्यमान् था, उसके संबंध में स्वर्गीय महामहोपाध्याय श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा का मत इस प्रकार है:—

"शासन की सुविधा के लिए देश भिन्न भिन्न भागों में बटा हुआ था। मुख्य विभाग भुक्ति (प्रान्त), विषम (जिला) और ग्राम थे। सबसे मुख्य संस्था ग्राम-संस्था थी। बहुत प्राचीन काल से भारत में ग्राम-संस्थाओं का प्रचार था। ग्राम के लिए वहां की पंचायत ही सब कुछ कार्य करती थी। केन्द्रीय सरकार का उसी से संबंध रहता था। यह ग्राम-संस्थाऐं एक छोटी-सी प्रजातंत्र सरकारें थीं, इनमें प्रजा का अधिकार था। केन्द्रीय सरकार के आधीन होते हुए भी यह एक प्रकार से स्वतंत्र थीं।

"प्राचीन तामिल इतिहास से उस समय की शासन पद्धति का विस्तृत परिचय मिलता है; परन्तु हम स्थानाभाव से संक्षिप्त वर्णन ही देंगे। शासन कार्य में राजा को सहायता देने के लिए पांच समितियां होती थीं। इनके अतिरिक्त जिले में तीन सभाऐं होती थीं। ब्राह्मण-सभा में सब ब्राह्मण सम्मलित होते थे। व्यापारियों की सभा व्यापार आदि का प्रबंध करती थी। चोल राज (प्रथम) के शिला लेखों से १५० ग्रामों में ग्राम-सभाओं के होने का पता चलता है। इन सभाओं के अधिवेशन के लिये बड़े बड़े भवन होते थे,

जैसे कि तंजोर आदि में बने हुए हैं। साधारण ग्रामों में बड़े बड़े वटवृक्षों के नीचे पंचायतों के अधिवेशन होते थे। ग्राम सभाओं के दो रूप-विचार-सभा और शासन-सभा होते थे। सम्पूर्ण सभा के सदस्य कई समितियों में विभाजित कर दिए जाते थे। कृषि, उद्यान, सिंचाई, व्यापार, मन्दिर, दान आदि के लिए भिन्न भिन्न समितियां थीं।" ८

मुस्लिम शासन-काल में भी ग्राम-पंचायतें ज्यों की त्यों कायम रहीं, उस समय ग्राम अपना स्वतंत्र शासन करते थे। प्रत्येक ग्राम में पंचायत होती थी जिसका सरपंच उत्तर भारत में मुखिया या चौधरी कहलाता था और दक्षिण भारत में अपगर। मुखिया या अपगर को या तो पंचायत की ओर से खेत मिल जाता था या फसल पर किसान लोक उपज का कुछ अंश दे देते थे। यह मुखिया पंचायत की ओर से छोटे छोटे मुकद्दमों के फैसले करते थे, मालगुजारी संग्रह करते थे। वे अमन शान्ति रखते थे। इन्हीं लोगों के द्वारा राजा और किसान के बीच संबंध बना रहता था।

भारत में अंगरेजों के पदार्पण के साथ ही इस देश की ग्राम-संस्था का विघटन आरम्भ होगया और अंगरेजी सत्ता स्थापित होजाने के उपरान्त तो ग्राम-तथा ग्राम-उद्योग नष्ट ही कर दिये गए।



---

८. महामहोपाध्याय पं. गौरीशंकर हीराचंद ओझा : 'मध्य कालीन भारतीय संस्कृति पृ. १५३—१५४

२

अंगरेज़ी राज्य में ग्राम-संस्था का विनाश

भारत में अंगरेजों के आगमन से पूर्व विदेशी जातियों ने अनेक बार प्रवेश किया, इस पर चढ़ाई की और अन्त में वे सब यहां बस गए। शक, हूण आदि अनेक जातियां तो हिन्दुत्व में सम्मिलित हो गई। आज भारत में उनका कहीं नाम भी नहीं सुना जाता। अरब, मुग़ल, पठान आदि मुस्लिम जातियों ने भारत पर आक्रमण किए, देश विजय कर अपना शासन स्थापित किया। परन्तु इन मुस्लिम शासकों ने भारतीय ग्राम-संस्था और भारतीय संस्कृति को नष्ट करने का प्रयत्न नहीं किया। ग्राम-जीवन सुरक्षित रहा और ग्राम-उद्योग भी ज्यों के त्यों कायम रहे। कहने का प्रयोजन यह है कि भारत का सामाजिक तथा आर्थिक संगठन मुस्लिम-काल में सुरक्षित रहा।

ब्रिटेन में सन् १६०० में ईस्ट इंडिया कंपनी ७० हजार पौंड की पूंजी के साथ भारत में व्यापार करने लिए स्थापित की गई। तत्कालीन

ब्रिटेन की सरकार ने कंपनी को भारत में व्यापार करने का आज्ञा पत्र दे दिया। इस कंपनी के अतिरिक्त ब्रिटेन का कोई भी नागरिक भारत के साथ व्यापार नहीं कर सकता था। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में यहां के शासकों-राजाओं तथा सम्राटों-से मिलकर व्यापार करने की सुविधाएँ प्राप्त कर लीं। सबसे पहले सूरत (बंबई प्रान्त) में इसने अपना केन्द्र स्थापित किया; फिर शनैः शनैः भारत के अन्य नगरों में भी अपने व्यापार केन्द्र स्थापित कर लिए।

अंगरेजों के आगमन के समय भारत की समृद्धि

जिस समय अंगरेज भारत में व्यापार करने आये उस समय इस देश की क्या अवस्था थी, इसका विवेचन जे. टी. सदरलैण्ड नामक पाश्चात्य विद्वान ने बड़ी सुन्दरता के साथ किया है। वह लिखते हैं :—

"देश की यह सम्पत्ति हिन्दुओं के विविध और व्यापक व्यवसायों द्वारा उत्पन्न की गई थी। सभ्य संसार की प्रायःप्रत्येक वस्तु का निर्माण उस युग में भारत में बहुत वर्षों पूर्व हो चुका था। भारत यूरोप या एशिया के किसी भी राष्ट्र के मुक़ाबले में एक महान् औद्योगिक देश था। उसका वस्त्र-व्यवसाय—सूती, ऊनी और रेशमी हस्त-कौशल द्वारा प्रस्तुत वस्त्र—समस्त सभ्य संसार में प्रसिद्ध था; इसी प्रकार उसके रत्न-जटित बहुमूल्य जवाहिरात भी प्रख्यात थे। विविध प्रकार के, विविध रंग और आकार के सुन्दर चीनी व मिट्टी के बर्तन संसार भर में प्रसिद्ध थे। लोह-स्टील, सोने-चांदी के सुन्दर काम के लिए भारत जगत-विख्यात था। भवन-निर्माण कला तथा वस्तु-कला के लिए भी वह प्रसिद्ध था। इन्जीनियरी के बड़े बड़े काम भारत में होते थे। उस समय इस देश में महान व्यवसायी, महान् व्यापारी, बैंकर और अर्थ शास्त्री थे। भारत में केवल महान जलयान ही नहीं बनते थे, प्रत्युत वह संसार के समस्त सभ्य देशों के साथ समुद्र और थल-मार्ग द्वारा व्यापार भी करता था। ऐसा था यह भारत देश जब अंगरेज़ों ने इसकी भूमि पर अपने पग रखे।"

अंगरेजी राज्य में ग्राम संस्था का विनाश

'प्राचीन तथा मध्य युगीन भारत' (Ancient and Medieval India) नामक पुस्तक के लेखक मेनिंग ने लिखा है :—

"ढाका की मलमल इतनी बारीक तैयार होती थी कि उन्नीसवीं सदी की मशीनें उतना बारीक सूत नहीं निकाल सकी थीं।"

सूती—वस्त्र का व्यवसाय भारत में इतनी उन्नत अवस्था में था कि वह योरूप और एशिया के देशों की राजधानियों में राज-परिवारों में खरीदा जाता था। टेवर्नियर ने लिखा है:—

"सन् १६८२ में अकेले सूरत बन्दर से १८,३६,००० और समूचे भारत से ३०,००,००० से अधिक थान इंगलैण्ड के लिए भेजे गए।"

इसके अतिरिक्त रेशमी वस्त्र भी—बहुत बढ़िया तैयार होते थे। टेवर्नियर ने केवल कासिमबाजार के संबंध में यह लिखा है :—

"बंगाल के इस गांव से २२ लाख पौंड वजन की रेशमी कपड़े की, २२ हजार गांठें विदेश जाती हैं। सोने चांदी के कलाबत्तू का काम किए हुए रेशम के गालीचे आदि, सैंकड़ों प्रकार की अत्यन्त सुन्दर वस्तुएं भारत में तैयार की जाती हैं। ढाका की मलमल तो इतनी अपूर्व बनती है कि कई बार तो वह सोने–चांदी के भाव बिकती है।"

इसी प्रकार बर्नियर लिखते हैं:—"बंगाल में इतना रेशमी माल तैयार होता है कि वह मुग़ल साम्राज्य का ही नहीं, बल्कि यूरोपियन साम्राज्य तक की आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है।" रेशमी माल के लिए बंगाल का मुर्शिदाबाद बहुत प्रसिद्ध था और आज भी वह सारे देश में रेशमी वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध है। बनारस, दक्षिण हैदराबाद, पूना, मैसूर, सूरत तथा थाना भी रेशमी माल के लिए प्रसिद्ध थे और इस युग में भी वे प्रसिद्ध हैं।

ऊनी वस्त्रों के लिए काश्मीर प्रसिद्ध था और आज भी वह प्रसिद्ध है। काश्मीर के दुशाले आज भी प्रसिद्ध हैं। सन् १८८६ में अंगरेजों की काश्मीर राज्य से जो संधि हुई थी, उसमें एक शर्त यह भी थी कि काश्मीर

राज्य प्रतिवर्ष काश्मीर का तैयार किया हुआ एक शाल सम्राट को भेजता रहेगा। यह शाल ८०००) रु० के मूल्य का होता था।

ग्राम-उद्योगों का विनाश

भारत की ग्राम-संस्था का सर्वनाश करने के उद्देश्य से अंगरेजों ने सबसे प्रथम ग्रामोद्योगों का विनाश किया। सूती-वस्त्र-व्यवसाय के विनाश के लिए सभी प्रकार से प्रयत्न किया गया, जिससे इंगलैण्ड के वस्त्र-व्यवसाय की उन्नति हो। अत्यन्त प्राचीन समय से भारत से बड़े सुन्दर और मुलायम वस्त्र एशियायी पश्चिमी देशों तथा यूरोप के नगरों में जल तथा थल मार्ग से जाते थे। भारत में तैयार छींटें और मलमल ने इंगलैण्ड की साधारण जनता में ही नहीं राज-प्रासादों और कुलीन परिवारों में भी लोकप्रियता प्राप्त करली थी। इसी कारण सन् १७०० और १७२१ में पार्लमेंट में कानून पास करवा कर हिन्दुस्तान के छपे हुए और रंगीन माल पर भारी चुंगी लगवाई गई और वैसे माल की आयात बन्द करवा दी गई।[1]

यही नहीं ईस्ट इंडिया कंपनी सूती वस्त्र पर अत्यन्त मुनाफ़ा लेती थी।

"भारतीय सूती वस्त्र के जिस थान की कीमत ७ शिलिंग पड़ती थी वह २० शिलिङ्ग में बेचा जाता था।"

लियाल नामक एक अंगरेज ने लिखा है :—"भारत पर हमारे शासन का मुख्य कारण यही है कि उसके व्यापार से हमें भारी लाभ होता है। सन् १६६२ में हम भारत से ३,५६,२८८ पौंड का माल इंगलैण्ड लाये और वह यहां १९,१४,६०० पौंड में बिका।" इस प्रकार ,एक साल में इससे कंपनी को १५,५८,३१२ पौंड का मुनाफ़ा हुआ!!

ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारतीय व्यापार से भारी मुनाफ़ा उठाया। यही नहीं उसके कर्मचारियों ने भारतीय जनता पर नानाविधि अत्याचार

1. Major B. D. Basu: Ruin of Indian Trade & Industry p. 4.

किए, बुनकरों को नाना प्रकार की यंत्रणाएं दीं और नवाबों ने भी जनता को लूटने में सहयोग दिया । सन् १७५७ से १७६७ की दशाब्दी में कंपनी ने ६० लाख पौंड भारतियों से भेंट स्वरुप लिए! लार्ड मेकाले ने इस संबंध में लिखा है:—

"बंगाल से क्लाइव की विदाई के बाद पांच वर्षों में अंगरेजों का कुशासन इस सीमा तक पहुंच गया था कि जिसके अस्तित्व में समाज की स्थिति संभव नहीं थी।......कंपनी के कर्मचारी भारतियों को महंगा माल खरीदने और उन्हें सस्ता माल बेचने के लिए बाध्य करते थे।...वे अपने साथ ऐसे पिछलग्गू रखते थे, जो प्रान्तों में घूम फिर कर ग्रामों का विनाश कर देते और आतंक या भय का राज्य स्थापित कर देते थे। कंपनी के प्रत्येक कर्मचारी को अपने अफ़सर के समान अधिकार प्राप्त थे और प्रत्येक अफ़सर के हाथ में कंपनी के समस्त अधिकार थे। इस प्रकार अल्प-काल में ही देश का धन कलकत्ता में खिंच आया और ३,००,००,००० भारतीय जन सर्वथा दारिद्रता और गरीबी के शिकार बन गये। वे पहले से (मुग़ल शासन में) निरंकुशता के कठोर शासन में रहते आये हैं। परन्तु यह निरंकुशता उनके लिए एक नूतन अनुभव था। अपने पूर्व शासकों के आधीन उनके पास कमसे कम एक साधन तो था ही। जब बुराई या अत्याचार उनके लिए असह्य हो जाता था तो प्रजा विद्रोही बन कर उस शासन का खा़त्मा कर देती थी। परन्तु अंगरेजी सरकार इस तरह थोड़े ही नष्ट की जासकती थी। अंगरेजी सरकार बर्बरता-पूर्ण निरंकुशता के रूप में अत्याचारी होने के साथ-साथ इतनी बलशाली थी कि उसे सभ्यता के समस्त उपकारण उपलब्ध थे।"[2]

विलियम बोल्टस नामक एक अंग्रेज व्यापारी ने अपनी आंखों देखी बात का जो वर्णन किया है, वह उसी के शब्दों में इस प्रकार है:-

"कम्पनी का हिन्दोस्तान में और ब्रिटेन के साथ जो व्यापार चलता

2. Macaulay: Critical & Historical Essays Vol. I p. 528.

है, वह, अगर सच कहा जाय तो अत्याचारों की एक शृंखला ही है। देश के जुलाहों और कारखानेदारों को इन अत्याचारों का अनिष्ट परिणाम अत्यन्त तीव्रता के साथ अनुभव करना पड़ता है। देश में तैयार होने वाली प्रत्येक वस्तु का एक ही मालिक बन बैठता है और अंग्रेज लोग अपने बनियों और कृष्णवर्गीय गुमाश्तों की सलाह से अपनी मनमानी तौर पर यह फैसला कर डालते हैं कि प्रत्येक कारखानेदार को उसे कितना माल तैयार करके देना है और उसकी कितनी कीमत लेनी चाहिए। गुमाश्ता कारखाने के केन्द्र स्थान पर पंहुच कर अपने ठहरने का एक स्थान निश्चित करता है और उसे 'अदालत' कहता है। वहां जुलाहों के आने पर गुमाश्ता अपने पट्टेदारों और चपरासियों के द्वारा उन्हें इस आशय के इक़रारनामों पर हस्ताक्षर करने के लिऐ बाध्य करता है कि 'हम आपको अमुक समय इतना माल देंगे।' और इसके लिऐ उन्हें कुछ पैसे पेशगी दे दिये जाते हैं। इसके लिऐ सामान्यतया गरीब जुलाहों की सम्मति लेना आवश्यक नहीं समझा जाता, क्यों कि गुमाश्ते उन्हें मनमाने कागज पर हस्ताक्षर करने के लिऐ बाध्य करते हैं और अगर वे पेशगी रुपये लेने से इन्कार करते हैं, तो बलपूर्वक रूपये उनकी कमर से बांध दिये जाते और फिर कोड़े मार कर उन्हें भगा दिया जाता है।

"इन जुलाहों में से बहुतेरों के नाम सामान्यतः गुमाश्तों के रजिस्टरों में दर्ज होते हैं। उन्हें अपने निश्चित गुमाश्ते के अतिरिक्त किसी दूसरे गुमाश्ते का काम करने की आज्ञा नहीं होती। उस गुमाश्ते की बदली हो जाने पर उसके रजिस्टर में यह नोट कर दिया जाता था कि उसके बाद आने वाले गुमाश्ते के इतने जुलाहे गुलाम हैं। इस नोट का यही उद्देश्य होता था कि बाद में आनेवाला गुमाश्ता भी पहले गुमाश्ते की तरह अत्याचार और लूट कर सके। इस विभाग में जो लूट होती है, वह कल्पनातीत है। इस सब लूट का अन्तिम परिणाम जुलाहों की लूट होता है, क्यों कि बाजार में उनके थान जिस क़ीमत में बेचे जाते हैं, ये गुमाश्ते उसमें १५

प्रतिशत और कहीं कहीं ४० प्रतिशत तक कम कीमत ठहराते हैं।......कच्चा रेशम लपेटने वाले 'नाडगौंड' पर भी इसी तरह के अत्याचार होते थे; इसलिए दुबारा इन अत्याचारों से बचने के लिए उन्होंने अपने अंगूठे काट लिए, ऐसे कितने ही उदाहरण हम जानते हैं।"[3]

किसानों का दमन

दक्षिण के माल-कमिश्नर मि० सेविलि मैटीयर ने सन् १८३६ में सर आर. ग्रांड को एक पत्र में भारत की स्थिति के संबंध में लिखाः—

"पिछले कुछ वर्षों में मैंने और मेरे अनेक सहयोगियों ने भारतवासियों का और विशेषरुप से राष्ट्र के आधार-भूत किसानों का विनाश अतीव दुःख के साथ देखा है। आप यह जानकर आश्चर्य चकित होंगे कि अत्याचार और दमन के कठोर मुस्लिम शासन में भी जब प्रजा पर कर अधिक लिये जाते थे, तब भी भारतीय जनता इस समयकी अपेक्षा अधिक सुखी थी और विचित्र बात तो यह है कि अगरेजों के इस दयालुता पूर्ण शासन का हमें अभिमान् है? क्या यह हमारी बदनामी नहीं है? ...इसके केवल आर्थिक दुष्परिणाम ही नहीं हुए। इसके अतिरिक्त कई दूसरी अवांछनीय और प्रतिकूल अवस्थाऐं भी पैदा होगई हैं, जिन्हें विदेशी शासन से कभी अलग नहीं किया जासकता। देश किस तरह गरीबी की चरम-सीमा तक पहुंच चुका है, यह आप इसी से समझ लेंगे कि सरकारी आय का एक बहुत बड़ा हिस्सा लोगों ने वर्षों से एकत्रित अपनी अल्प बचत को खत्म करके अदा किया है। मेरा संकेत किसानों की ओर है।... मुझे विश्वास है कि जांच से यह साबित हो जायगा कि किसान की सम्पत्ति का एक बड़ा हिस्सा—मवेशी और घर गिरस्ती के बर्तन तक—उनके हाथ से निकल कर सरकारी कोष को भरने के काम आते हैं। इस भयानक गरीबी का दूसरा परिणाम यह हुआ कि हजारों-लाखों किसान मजदूरी के लिये इधर उधर मारे मारे घूमते दृष्टिगत होते हैं। देश के किसी कोने में चले जाइए,

३ रमेशचन्द्र दत्त : ब्रिटिश भारत का आर्थिक इतिहास, भाग २ पृष्ठ १०

ये किसान आपको घूमते दृष्टिगत होंगे। वे बड़ी खुशी से छोटी से छोटी मज़दूरी भी स्वीकार कर लेते हैं। यदि एक शब्द में कहा जाय, तो यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं कि हर एक वस्तु और हरेक घटना देश को बड़ी तेजी के साथ भयानक दरिद्रता की ओर ले जा रही है।"

साम्यवाद के आचार्य कार्ल मार्क्स-ने अपनी विश्व विख्यात पुस्तक 'पूंजीवाद' में लिखा है:—

"वह अंग्रेज आक्रमणकारी था जिसने भारतीय कर्घे और चर्खे को नष्ट कर दिया। इंगलैण्ड ने यूरोपीय बाजार से भारतीय रूई तथा सूती वस्त्र के निष्कासन के लिये प्रयत्न आरम्भ कर दिया और तब उसने भारत में सूती वस्त्र का निर्यात आरम्भ कर दिया और सूती वस्त्र-व्यवसाय के महान केन्द्र भारत को अपने सूती वस्त्रों से पाट दिया। सन् १८१८ से १८३६ तक इंगलैण्ड से भारत को सूती माल का निर्यात १ से ५,२०० के अनुपात में हुआ। सन् १८२४ में अंगरेजी मलमल का भारत में निर्यात १,०००,००० गज़ था जब कि १८३७ में यह बढ़कर ६४,०००,००० गज़ हो गया। परन्तु इसके साथ ही साथ ढाका की जनसंख्या जो पहले १५०,००० थी, वह घट कर २०,००० ही रह गई! प्रसिद्ध भारतीय नगरों का यह पतन, जो वस्त्र-व्यवसाय के लिए दुनियां भर में सुप्रसिद्ध थे, वास्तव में अति दुःखद परिणाम था। ब्रिटिश स्टीम और सायंस ने समस्त भारत से कृषि और उद्योग के संबंध का खात्मा कर दिया।" [४]

इस प्रकार हम यह स्पष्टतः देखते हैं कि अंगरेजों ने भारत की ग्राम-संस्था का सर्वनाश करने के उद्देश से भारतीय किसानों को महा दरिद्र बना दिया और समस्त ग्रामोद्योगों को नष्ट कर भारत को कंगाल कर दिया।

ग्राम-स्वराज्य का विनाश

जब भारतीय कृषक और भारतीय कर्घे एवं चर्खे का विनाश कर दिया गया, तब ग्राम-स्वराज्य की रक्षा करने वाला ही कौन रह गया।

4. Marx and Engels on India by Mulk Raj Anand p. 18.

भारतीय नागरिकों तथा ग्रामीण जनता में आत्म-गौरव, देश-भक्ति, बलिदान, आत्म-निर्भरता एवं आत्म-रक्षा के उच्च माननीय भावों एवं आदर्शों की प्रतिष्ठा करने वाली ग्राम-सभाओं का समूल नाश करना अंगरेजी राज्य का सर्व प्रथम उद्देश्य था। इंगलैण्ड की समृद्धि तथा भारत में अंगरेजी वाणिज्य-व्यापार को चमकाने के लिए भारत को दरिद्र बनाना उसका मुख्य ध्येय था। इस प्रकार ग्राम-संस्था के विनाश के साथ ही समाज का सामाजिक एवं आर्थिक ढांचा भी दूषित और खंडित हो गया। ग्रामोद्योग भी गृह शिल्प और कला-कौशल सभी नष्ट होगए।

ग्राम-जीवन में अनेक बुराईयों ने घर कर लिया। इनमें सबसे भयानक थी जमींदारी प्रथा। इस कारण जमींदारों द्वारा किसानों का और भी आर्थिक शोषण होने लगा। अब ग्राम-सभा—प्रजातंत्र—शासन—का स्थान जमींदारों की निरंकुशता ने ले लिया। भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवादी शोषण—नीति का सबसे निकृष्ट अंग तो यह था कि इन ग्राम-संस्थाओं का सर्वनाश करके इनके स्थान पर किसी नवीन संगठन की रचना करने का प्रयत्न ही नहीं किया गया।

समस्त देश को शासन की सुविधा के लिए प्रान्तों में विभाजित कर दिया और प्रत्येक प्रान्त को कई जिलों में। प्रत्येक जिले को कई तहसीलों में और एक तहसील के अन्तर्गत कई सौ ग्राम रखे गए। जिलों के अधिकारी डिप्टी कमिश्नर या कलैक्टर नियुक्त किये गए; तह-सील के अधिकारी डिप्टी कलैक्टर। परन्तु ये ज़िले के हेड क्वाटर पर ही रहते थे। अतः प्रत्येक तहसील के लिये तहसीलदार और नायब तहसील-दार भी नियुक्त किए गये। तहसीलदार की सहायता के लिए कानूनगो और पटवारी नियुक्त किए गए।

नायब तहसीलदार, कानूनगो और पटवारी तहसील की मालगुजारी और कृषि संबंधी प्रबंध का कार्य करने लगे। प्रत्येक ग्राम में एक चौकीदार और एक मुखिया होता है। चौकीदार पुलिस को ग्राम के संबंध में प्रत्येक

घटना अथवा अपराध की सूचना देता है। मुखिया मालगुजारी विभाग का कर्मचारी है। यह अवैतनिक होता है। ग्राम की जनता मुखिया का चुनाव करती है।

अंगरेजी राज्य में ग्राम-पंचायतें

इस प्रकार ग्राम-संस्था का विनाश करने के बाद सन् १९१९ में मोन्टेग्यू चेम्सफोर्ड-शासन-सुधार रिपोर्ट में यह सिफारिश की गई कि भारत के ग्रामों में पंचायत—प्रणाली की स्थापना की जाय। इस सिफारिश के अनुसार भारत के प्रत्येक प्रान्त की धारा-सभा ने प्रान्तीय ग्राम-पंचायत कानून स्वीकार कर जो ग्राम-पंचायतें स्थापित करने की व्यवस्था की वे प्राचीन ग्राम-संस्थाओं से मौलिक रूप से भिन्न थीं। उनका कार्य क्षेत्र अति सीमित था। इस संबंध में सायमन-कमीशन (१९३०) ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है:—

"ग्राम-पंचायत का एक या ग्राम-समूह पर अधिकार होता है। उसका मुख्य काम ऐसे कार्यों का प्रबंध करना है, जो ग्राम के लिये उपयोगी हों जैसे कूप-निर्माण, ग्राम स्वास्थ्य; परन्तु कभी कभी उसे सड़क बनाने, अस्पताल खोलने और पाठशालाएँ खोलने के भी अधिकार दे दिये गये। मद्रास प्रान्त में तो सिंचाई और गावं के जंगलों की व्यवस्था भी पंचायतों के हाथ में सौंप दी गई। कुछ प्रान्तों में उसे छोटे छोटे दीवानी व फौजदारी के मुकद्दमों के फैसले करने के अधिकार भी दिये गये।

"सयुंक्त प्रान्त के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों में पंचायतों के सदस्य चुने जाते हैं। मद्रास, बंबई, आसाम में समस्त पुरुष वयस्कों और मध्य प्रान्त में समस्त वयस्कों को पंचायतों के सदस्यों के चुनाव के लिये मताधिकार प्राप्त है। मत हाथों के संकेत से लिये जाते हैं। ......

"इन ग्राम-पंचायतों के अधिकारियों की प्रतिष्ठा के लिये भारी प्रयत्न करने पर भी इस दशा में अधिक प्रगति नहीं दीख पड़ती।"

इन ग्राम-पंचायतों के संबंध में सायमन कमीशन ने उन कठिनाईयों

की भी चर्चा की है, जिनका इन्हें सामना करना पड़ता है। रिपोर्ट में इस संबंध में यह लिखा है :—

"ऐसे ग्रामों का चुनाव, जिनमें पंचायतों की स्थापना सफलता के साथ होसके, सावधानी के साथ होना चाहिये। चुनाव का क्षेत्र है। प्रथम तो उन ग्रामों को अलग रखना चाहिए जो संघर्ष औ के केन्द्र हैं। दूसरे, आवश्यक योग्यता से युक्त, बुद्धिमान् और स पुरुषों का अभाव है और ऐसे व्यक्ति मिल भी जायं तो वे एक ग्र एक ही जाति या कुटुम्ब से संबंधित होते हैं। परिणामतः एक मसु पंचायत नहीं बनाई जा सकती। अधिकांश ग्राम इस दिशा में सर्वथा सीन हैं। फिर अनुभव यह बतलाता है कि पंचायतें उस अवस्था में कम सफल होती हैं जब कि उनपर शक्तिशाली जमींदारों का प्रभाव ह है। अन्त में, सुयोग्य सरपंच के चुनाव में बड़ी कठिनाई होती है; क्या उसके व्यक्तित्व पर ही पंचायत की सफलता निर्भर है।... गाँव के झग जाति या साम्प्रदायक विवादों का कुछ स्थानों में पंचायतों पर बुरा प्रभा पड़ता है।"[5]

ग्राम-पंचायतों की स्थिति की जैसी आलोचना सायमन कमीशन ने की है, उससे यह स्पष्ट है कि इन पंचायतों से ग्रामों में न ग्रामोद्योगों का पुनर्जीवन संभव है और न इनसे ग्रामों में एकता और सगठन ही पैदा हो सकता है। पंजाब प्रान्त के भूतपूर्व ग्राम निर्माण के कमिश्नर एफ. एल. ब्रेनी आई. सी. एस. ने अपनी पुस्तक "श्रेष्ठ ग्राम" में एक स्थान पर अपना मत प्रकट किया है कि "पंजाबमें पंचायतें अपने ग्रामों का प्रबन्ध करने में र्वथा असफल रही हैं। इसका कारण है निरीक्षण का अभाव। और सत्य तो यह है कि जहां निरीक्षण की व्यवस्था थी, वहां स्वयं निरीक्षण-कर्ता ग्राम-व्यवस्था के संबंध में जानकारी नहीं रखते थे और न पंचों के शिक्षण का ही प्रबंध किया गया। इसके अतिरिक्त पंचायत का उपयोग प्रधानतः एक

5. Simon Commission Report Vol. I p. 305.

न्याय-पंचायत के रुप में ही किया गया—एक शासन—प्रबंध—समिति के रुप में नहीं और पंचायतों की स्थापना छोटे और संघठित ग्रामों में न कर बड़े बड़े ग्रामों में ही की गई, जहां पहले से ग्राम-वासियों में फूट और विघटन था।"

भारत-वर्ष में ग्राम-पंचायतें एक प्रकार से न्याय-पंचायतों के रूप में ही कार्य करती रही हैं। वे दीवानी व फौजदारी के मुकद्दमों के निर्णय करने में ही अपनी सार्थकता समझती हैं और ग्राम्य जनता में भी ऐसी ही भावना प्रचलित है। पंच अपने को 'अफ़सर' समझते हैं और ग्राम-वासियों को अपनी 'प्रजा'। इस प्रकार इन पंचायतों के प्रति न जनता में विश्वास है और न उत्साह ही। पंच प्रायः अयोग्य व्यक्ति ही होते हैं और विवादों में न्याय के स्थान में प्रतिशोध की भावना ही प्रबल होती है। जमींदार तथा महाजन ही प्रायः पंच, सरपंच होते हैं। जो किसानों तथा कर्जदार लोगों के मुकद्दमों में प्रायः पक्षपात ही करते हैं। पंचायती ग्रामों में एकता के स्थान में फूट और पार्टियां ही दीख पड़ती हैं।



Rev...

३

ग्राम-पंचायतों का पुनर्संघठन

विश्व-वंद्य राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने देश को केवल स्वाधीनता के पथ-पर ही अग्रसर नहीं किया, प्रत्युत उन्होंने आजीवन अपने देशवासियों को मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में—सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, औद्योगिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक,—आमूल और क्रान्तिकारी कार्यक्रम को स्वीकार कर देश की सर्वतोमुखी प्रगति करने के लिए मार्ग-दर्शन किया। गांधी जी ने देश को अपनी समास्याओं के हल करने के लिए जो मार्ग बतलाये हैं, उन पर यदि सद्भावना एवं उत्साह के साथ हम चलें तो सर्वोदय हो सकता है। उनकी कार्य-प्रणाली और विचार धारा में जनता-जनार्दन के हित एवं लोकसंग्रह की भावना इतनी ओतप्रोत थी कि वे सदैव सात लाख ग्रामों में रहने वाली ग्रामीण जनता के स्वराज्य पर जोर दिया करते थे। सन् १९३० में उन्होंने जो नमक-सत्याग्रह आरम्भ किया था उसके मूल में भी देश की गरीब जनता के कल्याण की भावना ही थी। वह नमक-कर को अनैतिक एवं पाप समझते थे।

951

इसीलिए भारत में जब सन् १९४७ के मार्च में राष्ट्रीय सरकार का बजट प्रस्तुत किया गया तो नमक-कर उठा दिया गया। नमक-सत्याग्रह का अन्त १९३४ में हुआ। कांग्रेस में दो पक्ष खड़े होगए; एक पक्ष सन् १९३५ के शासन-विधानको तोड़ने के लिए प्रान्तीय धारा सभाओं में जाना चाहता था। महात्मा गांधी अपनी प्रतिज्ञानुसार साबरमती सत्याग्रह आश्रम को वापस नहीं गये। वे वर्धा में जाकर रहने लगे; बाद में 'सेवाग्राम' में उन्होंने अपना आश्रम बनाया। यहां एक छोटे-से ग्राम में, कच्ची मिट्टी की बनी कुटिया में, सामान्य ग्राम-वासी की भांति उन्होंने अपना जीवन बिताना आरम्भ किया।

अपने जीवन-काल में गांधी जी सदैव 'ग्रामों की ओर जाओ' का उपदेश करते रहे। सन् १९३४ में उन्होंने इस उपदेश को अपने जीवन में चरितार्थ कर दिखलाया।

गांधी-योजना

बस उसी समय से देश भर में ग्राम्य-वातावरण पैदा हो गया। महात्मा जी ने ग्रामों में प्राचीन संस्कृति एवं कला-कौशल्य और शिल्प के पुनर्जीवन के लिय अखिल भारत-वर्षीय ग्रामोद्योग संघ की स्थापना की। उसी समय से केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारें ग्राम-सुधार [Rural Development] के कार्यक्रम को लेकर काम कर रही हैं।

महात्मा गांधी ग्रामों को किस रूप में देखना चाहते थे, यह उनके एक लेख के निम्न लिखित अवतरण से स्पष्ट हो जायगाः—

"स्वाधीनता का आरम्भ नीचे से होना चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक ग्राम एक रिपब्लिक या प्रजातंत्र अथवा पंचायत के रूप में होगा जिसे पूर्ण अधिकार होंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रत्येक गांव स्वाश्रयी तथा अपना प्रबन्ध आप करने के योग्य हो और यहां तक कि वह अखिल संसार के विरुद्ध भी अपनी रक्षा करने में सशक्त हो। उसे आत्म-रक्षा की शिक्षा दी जायगी और वह इस कार्य में बाहरी आक्रमण से रक्षा के लिए तत्पर रहेगा। इस प्रकार व्यक्ति ही ग्राम की इकाई है। इसका

यह मतलब नहीं कि वह पड़ौसियों या संसार के दूसरे देशों से सहायता न ले। वह स्वतंत्र रहेगा। इस प्रकार का समाज अत्यन्त सांस्कृतिक होगा, जिसमें प्रत्येक स्त्री-पुरुष अपनी मांग या आवश्यकता को समझता है। यही नहीं, वह यह जानता या जानती है कि किसी को ऐसी वस्तु की आकांक्षा न करनी चाहिए जिसे दूसरे उतने ही परिश्रम से नहीं प्राप्त कर सकते। इस प्रकार का सामाजिक संघठन अहिंसा और सत्य के आधार पर ही होना चाहिए, जो मेरी राय में, ईश्वर में विश्वास के बिना संभव नहीं।......

"इस संघठन में प्रत्येक धर्म को पूर्ण एवं समान स्थान होगा। हम सब एक ही महान वृक्ष की पत्तियां हैं, जो उखाड़ा नहीं जा सकता क्यों कि उसकी जड़ें पृथ्वी में बड़ी गहरी हैं। झंझावात का प्रचण्ड वेग भी उसका विनाश नहीं कर सकता।

"इस संघठन में उन यंत्रों के लिये कोई स्थान नहीं होगा, जो मानव—श्रमका स्थान ग्रहण करेंगे और जिस से सत्ता थोड़ेसे व्यक्तियोंके हाथ में चली जायगी। सांस्कृतिक मानव परिवार में श्रम का अपूर्व स्थान है। प्रत्येक यंत्र [मशीन] जो प्रत्येक व्यक्ति को सहायता देती है उसका समाजमें स्थान है।"

आगे ग्राम स्वराज्य की मीमांसा करते हुए राष्ट्रपिता गांधीजी लिखते हैं :—

"ग्राम-स्वराज्य का भाव यह है कि वह अपनी समस्त आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ौसियों से स्वतंत्र एक पूर्ण प्रजातंत्र है—प्रजाराज्य है। परन्तु दूसरे अन्य मामलों में वह पराश्रित भी है, जहां इस प्रकार का परावलम्बन आवश्यक है। इस प्रकार प्रत्येक ग्राम का पहला काम होगा अपने लिए अन्न, कपास और वस्त्र का उत्पादन। उसे अपने मवेशियों के लिये चारा सुरक्षित रखना चाहिये; वयस्कों तथा बालकों के लिए खेल-कूद तथा मनोरंजन के लिये मैदान आदि भी। यदि इतनी व्यवस्था के बाद भी भूमि बच रहे, तो अन्य व्यापारिक फसलें पैदा की

जायं; परन्तु गांजा, तंबाखू, और अफीम आदि पैदा न की जाय। गांव में एक ग्राम्य-रंगशाला, पाठशाला और सार्वजनिक पंचायत-भवन भी होंगे। वह अपने लिए पीने के स्वच्छ जल की व्यवस्था करेगा।...शिक्षा बेसिक तक अनिवार्य होगी। जहां तक संभव होगा प्रत्येक कार्य सहकारी आधर पर किया जायगा। उसमें कोई जातपातं, जैसी कि आज प्रचलित है, तथा अस्पृश्यता भी नहीं होगी।

"ग्राम-पंचायत के पीछे अहिंसा, सत्याग्रह और असहयोग की शक्ति होगी। ग्राम रक्षकों की सेवा अनिवार्य होगी। ग्राम के रजिस्टर में दर्ज नामावली में से क्रमवार प्रत्येक को ग्राम रक्षक का कार्य करना होगा।

"ग्राम का शासन-प्रबंध पांच व्यक्तियों की एक पंचायत द्वारा किया जायगा जिनका प्रतिवर्ष वयस्क ग्रामीण स्त्री-पुरुषों द्वारा चुनाव किया जायगा। उनके लिए नियत योग्यता भी निर्धारित होगी। इन्हें समस्त आधिकार प्राप्त होंगे। जिस भाव में दण्ड को माना जाता है, उस भाव में दण्ड की व्यवस्था नहीं होगी; परन्तु पंचायत को नियमादि की रचना (Legislative) न्याय-प्रबंध (Judiciary) और शासन-प्रबंध (Executive) तीनों प्रकार के अधिकार होंगें।"[1]

महात्मा गांधी की यह ग्राम-स्वराज्य की कल्पना है। वह इस कल्पना को स्वाधीन भारत में मूर्त रुप देने के लिए जीवित नहीं रह सके। यह वास्तव में हम भारतवासियों का दुर्भाग्य ही है। उनके हृदय में ग्रामीण जनता के लिए कितना प्रेम था, यह उनके उस विधान से स्पष्ट है, जो उन्होंने अपने बलिदान से एक दिन पूर्व ही कांग्रेस के भावी संघठन के लिए तैयार किया था।

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि गांधीजी ने ग्राम स्वराज्य की जो रूपरेखा प्रस्तुत की है, वह आदर्श ही नहीं प्रस्तुत व्यावहारिक भी है। यदि भारत की प्रांतीय सरकारें गांधीजी की इस रूपरेखा के आधार पर

1. M. K. Gandhi: Every Village A Republic; Harijan. 26th July 1946.

ग्राम पंचायतों का पुनर्निर्माण करें, तो वास्तव में ग्रामों का वास्तविक सुधार हो सकेगा।

डॉ० कैलाश नाथ काटजू की योजना

गत १५ अगस्त १९४७ के बाद उड़ीसा प्रान्त के गर्वनर के पद पर नियुक्त होने के पूर्व माननीय डा० कैलाश नाथ काटजू संयुक्त प्रान्त के मंत्री मण्डल में ग्राम-सुधार के मंत्री थे। इस पद पर रह कर उन्होंने प्रान्त में ग्राम-सुधार के लिए एक योजना तैयार की थी।

संक्षेप में माननीय डा० काटजू की योजना इस प्रकार है:—

ग्राम-स्वराज्य की दो विशेपताऐं होंगी। पहली यह कि ग्राम-संस्था का सदस्य प्रत्येक ग्रामवासी हो सकेगा और दूसरी यह कि इसे सम्पूर्ण ग्राम के सामुहिक हितों की रक्षा करनी होगी। जिन ग्रामों की जन-संख्या १२०० या १५०० से अधिक नहीं, उनमें बहु उद्देश्य वाली सहकारी समितियां (Multi-purpose Co-operative Societies) स्थापित की जायेंगी। इस सहकारी-संस्था में प्रत्येक परिवार को अपना एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार होगा। बड़े परिवार दो प्रतिनिधि भेज सकेंगे। एक ग्राम-संस्था में २०० से २५० तक सदस्य होंगे। इस सहकारी संस्था के अपने नियम-उपनियम होंगे। संस्था को यह भी अधिकार होगा कि वह जुर्माना करके, बहिष्कार करके या अन्य किसी उपाय से अपने सदस्यों से नियमों का पालन कराये।

यह ग्राम-संस्था ग्राम में हर प्रकार के ग्रामोपयोगी कार्य करेगी। उसमें अनेक विभाग होंगे; जैसे कृषि-विभाग, बिक्री-विभाग, ग्रामोद्योग-विभाग, स्वास्थ्य-सफाई-विभाग, शिक्षा-विभाग, सांस्कृतिक व मनोरंजन-विभाग। संस्था की बैठक महीने में एक या दो बार होगी।

इस संस्था के निर्णयों का पालन करने के लिए एक कार्यकारिणी सभा भी होगी। इसे 'पंचायत' कहा जायगा। इसका चुनाव प्रतिवर्ष होगा, इसमें अधिक सदस्य नहीं होंगे; परन्तु व्यवस्था ऐसी की जायगी कि

इसमें हर वर्ग वा जाति के प्रतिनिधि भाग ले सकें। यह पंचायत संस्था के प्रति उत्तरदायी होगी। पंचायत का अपना अलग कोष न होगा और न वह कोई नीति ही निर्धारित करेगी। यह सब कार्य संस्था करेगी।

संस्था के कोष के लिए प्रत्येक ग्रामीण को नियत चंदा देना होगा। आठ आना प्रति वर्ष सब लोकों को देना होगा। दलित वर्ग के लोकों को चार आना। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सदस्य को अपनी स्थिति के अनुसार चंदा देना होगा। ज़िला बोर्डों व सरकार से भी संस्था को सहायता मिलेगी।

ऐसी २५-३० संस्थाओं का एक संघ होगा। हर एक संस्था को संघ के पास प्रतिमास नियत चंदा भेजना होगा, जो एक या दो रुपया प्रतिमास होगा। प्रत्येक संस्था संघ में अपना एक प्रतिनिधि भेजेगी। एक निरीक्षक ऐसे संघ का मंत्री होगा। यह निरीक्षक संघ के अन्तर्गत संस्थाओं की देखभाल करेगा। प्रत्येक जिले में एक सहकारी संघ (co-operative federation) होगा जिस में उसके अन्तर्गत प्रत्येक संघ का एक प्रतिनिधि होगा।

प्रत्येक ग्राम-संस्था का एक मंत्री होगा, जो वैतानिक या अवैतानिक भी होगा। पटवारी सयुंक्त मंत्री का काम करेंगे।

ग्रामों में मुक़द्दमे बाजी को बंद करना संस्था का मुख्य कर्तव्य होगा। संस्था को समझौता 'राज़ीनामा' कराने का प्रयत्न करना चाहिए। ग्रामों में छोटी छोटी न्याय पंचायतें स्थापित करनी चाहिए।

संक्षेप में यही डा. काटजू की योजना है। इसमें और गांधी-योजना में कोई मौलिक भेद नहीं है।

सयुंक्त प्रान्त की योजना

सयुंक्त प्रान्त की कांग्रेस सरकार के प्रयत्न से प्रान्तीय धारासभा ने सन् १९४७ में सयुंक्त प्रान्तीय पंचायत राज क़ानून स्वीकार किया और २७ दिसंबर १९४७ से यह प्रान्त में लागू है। इस विधान के अनुसार ग्राम-सभा

में सभी प्रौढ़ सदस्य हो सकेंगे। वह आजीवन ग्राम-सभा के सदस्य रहेंगे। ग्राम-सभा की साल भर में दो बैठकें होंगी। ग्राम-सभा अपनी कार्य-कारिणी का चुनाव करेगी। यह गांव-पंचायत कहलायगी। इसमें ३० से ५१ तक सदस्य होंगे। ग्राम-सभा के एक सभापति और एक उप-सभापति भी होंगे।

प्रत्येक ग्राम-पंचायत के निम्न लिखित कार्य होंगेः—

(१) जन-मार्ग-निर्माण, उनकी मरम्मत्, सफाई व रोशनी।
(२) चिकित्सा-संबंधी सहायता।
(३) सफ़ाई के लिए और संक्रामक रोगों के दूर करने और उनको फैलने से रोकने के लिए चिकित्सा-संबंधी और रोक थाम के उपाय काम में लाना।
(४) ग्राम-सभा की सम्पत्ति की रक्षा।
(५) जन्म, मृत्यु, विवाह के ब्योरे रजिस्टर में रखना।
(६) जन-मार्ग, सार्वजनिक स्थानों, एवं ग्राम-सभा की सम्मति से अनाधिकारी को हटाना।
(७) श्मशान घाटों की व्यवस्था।
(८) मेलों का प्रवंध।
(९) प्राईमरी स्कूल खोलना व क़ायम रखना।
(१०) गोचर-भूमि की रक्षा व व्यवस्था।
(११) जल की व्यवस्था।
(१२) नई इमारतें बनाने के संबंध में नियम।
(१३) खेती-बाड़ी, व्यापार और उद्योगधंधों की उन्नति में सहायता करना।
(१४) न्याय-पंचायतों की व्यवस्था।
(१५) पशु-गणना और जन-गणना।
(१६) सूतिका और शिशु हित का साधन।
(१७) खाद इकट्ठा करने के लिये स्थान नियत करना।

(१८) अन्य कार्य जो उसे सौंपे गये हों।

उपर्युक्त कार्य प्रत्येक ग्राम-पंचायत के लिये अनिवार्य हैं। इनके अतिरिक्त ग्राम-पंचायत अपने अधिकार-क्षेत्र में निम्न लिखित कार्य भी कर सकेगी:—

(१) जन-मार्ग के दोनों ओर पेड़ लगाना तथा उनकी रक्षा।
(२) मवेशियों की नस्ल सुधारना व उनकी चिकित्सा।
(३) भूमि को समतल कराना।
(४) ग्राम की रक्षा के लिये ग्राम-स्वयं-सेवक दल का संगठन।
(५) सरकारी ऋण प्राप्त करने, उन्हें आपस में वितरण करने, उनके चुकाने आदि के संबंध में किसानों की सहायता करना।
(६) सहयोग-संबंधी कामों की उन्नति और उन्नत बीजों और औज़ारों के गोदाम स्थापित करना।
(७) दुर्भिक्ष या दूसरी विपत्तियों के समय सहायता।
(८) अबादी के क्षेत्र को बढ़ाना।
(९) पुस्तकालय एवं वाचनालय स्थापित करना।
(१०) मनोविनोद के लिये अखाड़े आदि खोलना।
(११) खाद और बुहारन जमा करने व हटाने के लिए नियम।
(१२) आबादी के २२० गज़ के भीतर चमड़े को साफ़ करने और रंगने की मनाई करना या उसके संबंध में नियम बनाना।
(१३) विविध जातियों में सद्भाव और सामाजिक एकता बढ़ाने के लिए संस्थाऐं स्थापित करना।
(१४) सार्वजनिक रेडियो-सेट व ग्रामोफोन का प्रबंध।
(१५) सार्वजनिक उपयोगिता का कोई ऐसा कार्य करना, जिससे गांव की जनता की भौतिक व नैतिक उन्नति हो।

ग्राम-पंचायतों के कार्यों की उपर्युक्त सूची से यह सर्वथा स्पष्ट है कि पंचायतों की अधिकार-सीमा में पर्याप्त विस्तार हो गया है। यदि इस नये

पंचायत विधान का सद्भावना और लोकहित की दृष्टि से प्रयोग किया गया, तो वास्तव में ग्रामों में सच्चा स्वराज्य स्थापित हो सकेगा।

ग्राम-पंचायतें कृषि, व्यापार और उद्योग धंधों में उन्नति करने के कार्य-क्रम में सहायता दे सकती हैं। यह उनका अनिवार्य कर्तव्य है। लेकिन सहयोग-संबंधी कामों की उन्नति के लिए व्यवस्था करना उनका ऐच्छिक कार्य है। ऐसा करके उचित ही किया गया है। क्यों कि प्रत्येक ग्राम-पंचायत सहयोग-संबंधी कार्य की उचित व्यवस्था नहीं कर सकती।

ग्राम-स्वराज्य की सफलता दो मुख्य स्थितियों पर निर्भर है। प्रथम तो यह कि पंचायत-सभा में जो व्यक्ति चुने जायं, वे शिक्षित, सुयोग्य, सदाचारी और लोक संग्रही मनोवृत्ति के हों उनमें जातिगत या साम्प्र-दायिक भावना न हो। वे सब की भलाई के लिये प्रयत्नवान् हों। दूसरी बात यह है कि पंचायत सभा की रचना एवं उसका कार्य इस ढंग से संपादन किया जाना चाहिए कि वह ग्राम संघटन को नष्ट न करे। पंचायत का कार्य तो ग्राम के सभी लोगों में एकता और संघटन की अभिवृद्धि करना होना चाहिये।

इस योजना में—संयुक्त प्रान्तीय पंचायत राज—विधान में—यदि एक अध्याय में ग्रामवासी के कर्त्तव्यों और अधिकारों पर भी प्रकाश डाल दिया जाता, तो इससे बड़ा लाभ यह होता कि ग्रामवासी यह अनुभव करने लगता कि पंचायत उसकी नागरिक स्वाधीनता की रक्षा करेगी, उसका विनाश नहीं।

इस विधान में एक त्रुटि यह भी है कि कृषि-मजदूरों (Agricultral labour) के हित व कल्याण के संबंध में कुछ भी उल्लेख नहीं किया गया है। शिशु—मंगल की व्यवस्था पंचायत के हाथ में दे दी गई है; लेकिन श्रमजीवियों के प्रश्न के संबंध में यह विधान मौन है। ग्राम—पंचा-यतों का इस प्रश्न से सीधा संबंध है। अतः इस प्रश्न पर भी विधान में विचार होना आवश्यक है।

ग्रामों में दलित जातियों तथा पिछड़ी जातियों की दशा अत्यन्त शोचनीय है। ग्रामों में आज भी अस्पृश्यता भयंकर रूप में व्यापक है। इसलिए इस कारण द्वारा इन जातियों की रक्षा के लिए विशेष व्यवस्था होनी चाहिए। ग्रामों में रहनेवाली दलित जातियों के लोगों पर जमींदारों तथा उच्च जातीय हिन्दुओं द्वारा अत्याचार किये जाते हैं—बेगार ली जाती है और यहां तक कि बेगार न देने पर इन लोगों की नृशंसतापूर्वक हत्या कर दी जाती है। अत्याचारों का अन्त यहां ही नहीं हो जाता, प्रत्युत इन जातियों के लोगों को प्रायः गांव से निकाल दिया जाता है, मानों इन्हें ग्रामों में रहने का अधिकार न हो।



४

मताधिकार और निर्वाचन

मताधिकार

ग्राम की जनता को लोकतंत्र की शिक्षा देने तथा शासन-सत्ता में प्रत्यक्ष भाग लेने का सुयोग देने के उद्देश्य से यह अत्यन्त आवश्यक है कि ग्राम-सभाओं में प्रत्येक प्रौढ़ स्त्री-पुरुष को भाग लेने का अधिकार हो। जब भारत की विधान—परिषद (Constittuent Assembly) ने वयस्क मताधिकार के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया है, तब ग्राम-सभाओं के लिये वयस्क मताधिकार को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

संयुक्त प्रान्तीय ग्राम-पंचायत विधान ने उन सब प्रौढ़ व्यक्तिओं को ग्राम-सभा का सदस्य स्वीकार किया है जो ग्राम-सभा-क्षेत्र के स्थायी निवासी हों। परन्तु निम्न श्रेणी का कोई व्यक्ति सदस्य नहीं रह सकेगा:—

(१) जिसका दिमाग़ ठीक न हो, या

(२) जिसे कोढ़ हो, या
(३) जिसे दिवालियेपन से बरी न किया गया हो, या
(४) जो सरकारी कर्मचारी हो, या
(५) जो स्थानीय स्वराज्य संस्था (चुंगी या ज़िला बोर्ड) का कर्मचारी हो, या
(६) जो ग्राम-सभा के क्षेत्र या उसके विभाग में कर्मचारी हो, या
(७) जो आनरेरी माजिस्ट्रेट, आनरेरी मुंसिफ़ या आनरेरी असिस्टैंट कलैक्टर हो, या
(८) उसे चुनाव-संबंधी किसी अपराध के लिये दण्ड मिल चुका हो, या
(९) उसे नैतिक अधःपतन से संबंधित किसी अपराध में अपराधी ठहराया जा चुका हो अथवा दण्ड-विधि-संग्रह (Criminal procedure code) की धारा ११० के आधीन अच्छे चालचलन के लिए ज़मानत जमा करने की आज्ञा दी गई हो।

परन्तु (३), (८) तथा (९) के आधीन अयोग्यता के प्रतिबंध प्रान्तीय सरकार या उसके द्वारा नियत अधिकारी द्वारा हटाये जा सकते हैं।

निर्वाचन

ग्राम में स्थायी रहने वाले प्रत्येक प्रौढ़ स्त्री पुरुष को जिसकी आयु २१ वर्ष हो, ग्राम-सभा का सदस्य बनने का अधिकार है। यह ग्राम-सभा एक 'पंचायत' का चुनाव करेगी जिसमें ३० से ५१ तक सदस्य होंगे। अब प्रश्न यह है कि यह निर्वाचन किस पद्धति के अनुसार होने चाहिए। यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है।

३ जून १९४७ की लार्ड मौण्टन वेटन की भारत-विभाजन योजना के अनुसार भारत दो भागों में विभाजित होगया। सिंध, बिलोचिस्तान, सीमाप्रान्त, पश्चिमी पंजाब, पूर्वी बंगाल और आसाम के सिलहट ज़िले को मिलाकर पाकिस्तान राज्य क़ायम किया गया; शेषभाग 'भारतीय संघ' में सम्मिलित है। १५ अगस्त १९४७ को भारत में दो उपनिवेश भारतीय संघ

तथा 'पाकिस्तान डोमीनियन' क़ायम होगए। इसके बाद २७ अगस्त १९४७ को भारतीय-विधान-परिषद् में अल्प-मत सलाहकार समिति के अध्यक्ष सरदार वल्लभ भाई पटेल ने समिति की रिपोर्ट परिषद् के समक्ष प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट में धारा-सभाओं में निर्वाचन के लिए सयुंक्त निर्वाचन-प्रणाली को स्वीकार किया गया है। अल्पसंख्यक जातियों, मुसलमान, दलित जातियां (Scheduled Castes) एंगलों इंडियन, पारसी, कबीलों, भारतीय ईसाई, तथा सिक्खों के लिए धारा सभाओं में स्थान सुरक्षित रखे जाने की व्यवस्था की सिफारिश की गई है।

इस प्रकार स्वाधीन भारत में साम्प्रदायिक निर्वाचन प्रणाली को कोई स्थान नहीं होगा।

गत ३० जनवरी १९४८ को बिरला भवन नई देहली में विश्व-वंद्य राष्ट्र पिता महात्मा गांधी के अनुपम बलिदान के बाद तो भारत की स्थिति में आश्चर्यजनक परिवर्तन होगया। भारत की केंद्रीय सरकार ने अखिल भारतीय राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ तथा मुस्लिम नेशनल गार्ड को ग़ैर क़ानूनी घोषित करके भारत को साम्प्रदायिकता के विषैले प्रभाव से मुक्त करने के लिए जो क़दम उठाया, उससेभारत में एक नूतन वातावरण उत्पन्न हो गया है।

अखिल भारतवर्षीय हिन्दू महा सभा ने यह निश्चय कर लिया है कि हिन्दू महासभा राजनीति में भाग नहीं लेगी। मद्रास में भारतीय संघ-मुस्लिम लीग की हाल में जो बैठक हुई है, उसमें यद्यपि यह निश्चय नहीं किया गया है कि मुसलिम-लीग राजनीतिक कार्यों में भाग नहीं लेगी, तथापि प्रस्ताव में यह स्वीकार किया गया है कि वह आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक तथा धार्मिक कार्यक्रम में प्रमुख भाग लेगी।

इस प्रकार जो कार्य वर्षों से प्रचार, उपदेश तथा सभा-सम्मेलनों के प्रस्तावों द्वारा पूरा न हो सका, वह महात्मा जी के बलिदान ने पूरा कर दिया। भारत के राष्ट्रीय-जीवन से साम्प्रदायिकता का विनाश वास्तव में अभिनंदनीय ही नहीं, प्रत्युत भारत के राष्ट्रीय जीवन के स्वास्थ्य-प्रद विकास के लिये परम

आवश्यक है।

ऐसी स्थिति में भारतीय शासन विधान के आधार पर ग्राम-पंचायतों का संघठन भी संयुक्त निर्वाचन प्रणाली के आधार पर ही होना उचित एवं उपयोगी होगा।

यह अत्यन्त हर्ष की बात है कि संयुक्त प्रान्त की सरकार ने पंचायत राज विधान १९४७ में निर्वाचन का आधार संयुक्त चुनाव प्रणाली को स्वीकार किया है।

पंचायत में अल्प-संख्यक तथा बहु-संख्यक जातियों के सदस्यों का निर्वाचन ग्राम-सभा की सीमा के अन्तर्गत उनकी जनसंख्या के अनुपात से होगा। परन्तु परिगणित जातियों या दलित जातियों (Scheduled Castes) के लिये यह नियम रखा गया है कि ग्राम-पंचायतों के लिये जो प्रथम निर्वाचन होगा, उसमें तो उनके सदस्य उनकी ग्राम में रहने वाली जन संख्या के अनुपात से चुने जायंगे। परन्तु बाद के निर्वाचनों में उनके प्रतिनिधियों की संख्या प्रान्तीय धारा सभा द्वारा नियत की जायगी। हमारी सम्मति में परिगणाति जातियों के ग्रामों में उनके 'हितों' की रक्षा के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उनके प्रतिनिधि उनकी जन संख्या के अनुपात से ही भविष्य के चुनावों में चुने जायं। यदि उनके प्रतिनिधित्व में कमी कर दी गई, तो इससे उनमें न पंचायत के प्रति श्रद्धा रहेगी और न वे अपने अधिकारों का सुरक्षित रूप में भोग ही कर सकेंगे। परिगणति जातियों के लोगों की जनसंख्या समस्त ग्रामों में बिखरी हुई हैं; वे कुछ विशेष भागों में केन्द्रीभूत नहीं हैं। ऐसी स्थिति में उनके अधिकारों की रक्षा का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण हो जाता है।

निर्वाचन गुप्त बैलट पत्रक द्वारा होना चाहिए। इस के लिए यह उचित होगा कि प्रत्येक उम्मीदवार के लिये एक चित्रमय बैलट बक्स (Pictorial Ballat Box) निर्वाचन केन्द्र पर रखा जाय। यह प्रणाली रंगीन-बक्स प्रणाली की अपेक्षा अधिक उपयुक्त और आसान होगी।



५

पंचायत का राजस्व

ग्राम-पंचायतों के पुनर्संगठन के फलस्वरूप जो नयी पंचायतें स्थापित होंगी, उनका कार्य-क्षेत्र विशाल और महान होगा; ग्राम-पंचायतों को ग्रामों के स्वायत्त-शासन के पूर्ण अधिकार होंगे। कृषि, ग्रामोद्योग, स्वास्थ्य सफाई, शिक्षा, जल, जन-मार्ग, मनोरंजन आदि की व्यवस्था उनके हाथ में होगी। इसके अतिरिक्त न्याय—प्रबंध भी उनके आधीन होगा। इस प्रबंध के लिए प्रान्तीय सरकार तथा ज़िला बोर्ड से सहायता मिलेगी; परन्तु इन कामों में जितना व्यय होगा उसे पूरा करना इस सहायता के आधार पर संभव नहीं होगा।

अतः ग्राम-पंचायतों का अपना कोष होना चाहिए, जिससे वे अपने समस्त कार्यों को पूरा कर सकें।

ग्राम-पंचायतों की आय के साधन भी होने चाहिए और उन्हें कर लगाने का भी अधिकार होना चाहिए।

आय के साधन

ग्राम-पंचायतों की आय के लिए निम्न प्रकार की रक़में ग्राम-कोष में जमा की जायगीं :—

(१) पंचायत—विधान के आधीन कर से प्राप्त धन।
(२) प्रान्तीय सरकार द्वारा ग्राम–सभा को सौंपी हुई रक़म।
(३) पिछली ग्राम–पंचायत-कोष का शेष धन।
(४) वे सब रक़में जो अदालत की आय से पंचायत–कोष में जमा हों।
(५) ऐसी कुल रक़में जो न्याय पंचायत को मुक़द्दमे के राज़ीनामे के रूप में प्राप्त हुई हों।
(६) ग्राम पंचायत के कर्मकारियों द्वारा एकत्रित कूड़ा-कचरा, घर, गोबर, और मृत पशु की लाशें बेचने से जो आमदनी हो।
(७) नज़ूल की भूमि का लगान।
(८) ज़िला बोर्ड आदि द्वारा प्राप्त सहायता।
(९) ऋण या दान।
(१०) ऐसी दूसरी रक़में, जो प्रान्तीय सरकार की किसी सामान्य या विशेष आज्ञा द्वारा ग्राम-कोष को दे दी जायं।
(११) ग्राम पंचायत जो रक़में प्रान्तीय सरकार या मालिकों की ओर से प्राप्त करेगी, उन्हें भी ग्राम-कोष में जमा करेगी।

ग्राम-पंचायत के कर

ग्राम–पंचायत को सरकारी सहायता, ज़िला बोर्ड की सहायता तथा न्याय–पंचायत की जुर्मानों से ही विशेष आमदनी होगी। इसके अतिरिक्त उसे निम्न प्रकार के कर (टैक्स) लगाने का भी अधिकार होगा:—

(१) बाज़ारों तथा मेलों के संबंध में लगाये गए टैक्स।
(२) एक आना फ़ी रुपया लगान पर टैक्स काश्तकारों से वसूल किया जायगा।
(३) अधिक से अधिक ६ पाई फ़ी रुपया माल गुज़ारी पर ज़मींदारों से

वसूल करेगी।

(४) व्यापार, कारबार और पेशों पर टैक्स।

(५) ऐसी इमारतों के स्वामियों पर टैक्स जो ऊपर दिये हुए कोई भी टैक्स अदा न करते हों।

सन् १९३८ में संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने संयुक्त प्रान्तीय स्थानीय स्वायत्त-शासन-समिति, स्थानीय शासन-संस्थाओं एवं ग्राम-सभाओं के संघटन के संबंध में रिपोर्ट तैयार करने के लिये नियुक्त की थी। इस समिति ने ग्राम पंचायतों की आमदनी का जो अनुमान-पत्र तैयार किया था, वह निम्न प्रकार है:—

क्रम संख्या	मद	धन (रुपयों में)	
१	कारतकारों का लगान (छूट की कमी के बाद)	१५,०५,७२९४९	
२	कारतकारों के लगान पर कर	७५,२८,६४७	※
३	ज़मींदारों द्वारा सरकार को अदा की जाने वाली मालगुज़ारी	६,०१,९६४७५	
४	ज़मींदारों को मालगुज़ारी से प्राप्त मूह आमदनी	९,०४,०६,४७१	
५	ज़मींदारों की मूल आमदनी पर टैक्स	५३,६७,८८३	※
६	प्रान्तीय सरकार द्वारा ग्राम-पंचायतों को सहायता	३०,०८,३२३	※
७	ज़िला बोर्डों द्वारा प्राप्त सहायता	१८,७१,१३६	※

संयुक्त प्रान्त में कुल ग्राम-पंचायतें ३०,००० होंगी और १२०० टाउन एरिया कमेटियां होंगी। समस्त ग्राम पंचायातों की कुल आमदनी इस प्रकार (*) के चिन्ह वाली मद्दों का जोड़ १,७७,७५,९८९ रुपये होगा। इसे ३१, २०० संस्थाओं में विभाजित करने पर प्रत्येक के हिस्से में ५७० रुपये सालाना आयेंगे। इस आमदानी के अतिरिक्त ग्राम-पंचायतों को व्यापार धन्धों व पेशों पर टैक्स, मेलों पर टैक्स, न्याय-पंचायतों द्वारा जुर्माने से प्राप्त रक़म आदि से भी धन प्राप्त होगा। इस प्रकार २०० से ३०० तक इन मद्दों से भी आमदनी हो जायगी। ग्राम-पंचायत की औसत आय ४००) रु. से

८००) रुपये सालाना तक होगी। परन्तु ग्राम-पंचायत को जो कार्य सौंपे गए है, उनका ठीक ठीक प्रकार सें संचालन इतनी कम रक़म से कठिनाई से ही—हो सकेगा।

हां, यदि ग्राम-पंचायतें जन–सेवा की दृष्टि से सहयोग–पूर्वक कार्य करें और प्रत्येक सदस्य स्वेच्छा पूर्वक ग्राम–सभा के लिये शारीरिक या मानसिक सेवा करना स्वीकार करे तो ऐसा होना संभव है।

संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने ज़मींदारों की मालगुज़ारी पर अधिक से अधिक ६ पाई प्रति रुपया टैक्स लगाया है और काश्तकारों के लगान पर एक आना प्रति रुपये पर टैक्स लगाया है। इस प्रकार का भेद क्यों रखा गया, यह समझ में नहीं आता। यू. पी. के काश्तकार प्रति वर्ष १५ करोड़ रुपये से भी अधिक लगान देते हैं। इसमें से ९॥ करोड़ रुपया ज़मींदारों की ज़ेबों में जाता है और ६। करोड़ रुपया सरकारी ख़ज़ाने में।

अब यू. पी. पंचायत राज-विधान १९४७ के अनुसार काश्तकारों को टैक्स के रूपमें ९४,१०,८०९ रुपये ग्राम-पंचायतों के कोष में देने पड़ेंगे; लेकिन ज़मींदारों को केवल १८,८१,१३९ रुपये ग्राम-पंचायतों को देने होंगे। परन्तु समाज में—आज के पूंजीवादी समाज में—ग्रामों में ज़मींदारों की ही प्रभुता है। ऐसी दशा में यह किसानों के प्रति बहुत ही महंगा न्याय होगा।



६

न्याय-पंचायत

न्याय-पंचायत का ग्राम-संघटन में एक महत्वपूर्ण स्थान होगा। आज हम ग्रामों में सुख-समृद्धि, ज्ञान, प्रेम, संघठन, और बंधुत्व के स्थान पर नग्न दारिद्रय, गरीबी, बेकारी, भयानक रोगों, अज्ञान तथा फूट का ही साम्राज्य देखते हैं। कुछेक बड़े ज़मींदारों तथा बड़े काश्तकारों को छोड़कर अधिकांश लोग नितान्त गरीब हैं। कृषि-मज़दूरों की संख्या तो और भी अधिक है। आज हमारे ग्राम-वासी मालगुज़ारी, खेती तथा लेनदेन संबंधी मुक़द्दमों की उलझन में इतनी बुरी तरह ग्रस्त हैं कि उन पर दया आती है। हमारे नगरों में, अदालतों में, जितने मुक़द्दमे इन गरीब ग्रामीणों के आते हैं, उतने नगर के लोगों के नहीं आते।

ग्रामीण जनता इस भीषण मुक़द्दमेबाज़ी के कारण बड़ी दुःखी है और उससे लाभ उठा रहे हैं मुक़द्दमेबाज़ ज़मींदार, ज़मींदारों के कर्मचारी, वकील, बैरिस्टर, मुख़्तार और अदालत के रिश्वतख़ोर कर्मचारी। हमारी राय में यदि

इन ग्रामीणों के इस भारी शोषण का अन्त करना ही अभिप्रेत है, तो प्रान्तीय सरकारों को ग्रामीणों के मुकद्दमों में समझैता करने के लिए 'पंचायती बोर्ड' (Arbitration Board) स्थापित करने चाहिए। वकीलों को इन बोर्डों में वकालत करने की आज्ञा न दी जाय। परन्तु जो पक्ष चाहे वह अपना सुयोग्य एवं शिक्षित प्रतिनिधि नियुक्त कर अपने पक्ष को बोर्ड के समक्ष रख सकता है।

ग्रामों में न्याय-पंचायतों को भी मजिस्ट्रेटों की अदालतों के समान कार्य नहीं करना चाहिए। न्याय-पंचायतों का मुख्य कार्य तो मामलों तथा विवादों का न्याय पूर्वक निपटारा करना अथवा समझौता कराने का प्रयत्न करना चाहिए। इसी में इनकी सार्थकता होगी और यह ग्रामीण भाईयों की एक बड़ी सेवा होगी।

ब्रिटिश-शासन के अन्तर्गत जो ग्राम-पंचायतें स्थापित की गई थीं, उनके कारण तो ग्रामों में और भी पार्टी बन्दी और फूट बढ़ गई। पंचों तथा सरपंचों ने मनमाने ढंग से कार्य किया और पक्षपात के कारण जनता का इन पंचायतों पर से विश्वास उठ गया।

न्याय-पंचायता का संघठन

संयुक्त प्रान्तीय पंचायत राज-विधान के अनुसार प्रत्येक ज़िले को कई क्षेत्रों में विभाजित किया जायगा और प्रत्येक क्षेत्र के अन्तर्गत कई गांव-सभाऐं होंगी। इन क्षेत्रों का निर्माण ज़िला माजिस्ट्रेट करेगा। प्रत्येक क्षेत्र की प्रत्येक ग्राम-सभा नियत योग्यता वाले पांच, ऐसे प्रौढ़ पंच चुनेगी जो स्थायी रुप से उसके अधिकार-क्षेत्र के भीतर रहने वाले हों। न्याय-पंचायत के सब पंच एक सरपंच चुनेंगे। सरपंच ऐसा व्यक्ति होगा जो लिखने-पढ़ने की योग्यता रखता हो। प्रत्येक पंच का कार्यकाल ३ वर्ष के लिये रहेगा। पंच को पद-ग्रहण की शपथ भी लेनी होगी। शपथ इस प्रकार है:—

"मैं (यहां पंच का नाम) शपथ लेता हूँ कि मैं सवैध स्थापित भारत के शासन के प्रति सत्यव्रत तथा पूर्णा निष्ठ रहूंगा और मैं सब प्रकार के लोगों

के प्रति न्याय करूंगा। भय, पक्षपात, स्नेह अथवा दुष्कामना विना, अदालती पंच के नाते, अपने कर्तव्यों को सचाई से पालन करूंगा। अतःईश्वर मुझे सामर्थ्य दे।"

पंच अपने पद से त्यागपत्र भी दे सकेगा और पंच या सरपंच को नियत अधिकारी पद से अलग भी कर सकेगा। ऐसे अलग किए गए पंच का दुवारा ३ वर्ष तक चुनाव न होसकेगा।

पंच-मण्डल की नियुक्ति

सरपंच प्रत्येक मुकद्दमे, नालिश या कार्रवाई के लिए पंच-मंडल में से पांच-पंचों का एक बैंच नियुक्त करेगा। इनमें कमसे कम एक पंच लिखने-पढ़ने की योग्यता रखने वाला होगा। बैंच के इन पांच पंचों में एक एक पंच उन दोनों ग्राम-सभाओं के क्षेत्रों से लिया जायगा जिनमें वादी या प्रतिवादी रहते हों।

कोई भी पंच या सरपंच ऐसे किसी मुक़द्दमे में भाग नहीं लेगा जिसमें वह या उसका कोई निकट संबंधी, नौकर या मालिक संबंधित हो।

न्याय-पंचायतों के अधिकार

न्याय-पंचायतों की अधिकार-सीमा में किए गए अपराधों या अपराधों के प्रयत्नों की सुनवाई का अधिकार निम्न लिखित मामलों में होगा।

१. भारतीय-दण्ड-विधान (Indian Penal Code) के अन्तर्गतः—

(१) सैनिक, नौ सैनिक तथा हवाई-सेना के सैनिक द्वारा प्रयोग की जाने वाली पोशाक-वर्दी-आदि का धारण करना। (धारा १४०)

(२) दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा सार्वजनिक शान्ति—भंग (१६०)

(३) सम्मन तामील न हो—इस उद्देश्य से छिपना या अलग हो जाना। (१७२)

(४) सरकारी अफ़सर द्वारा उपस्थित होने के लिये दिये गए आदेश की उपेक्षा (१७४)

(५) सरकारी अफ़सर के प्रश्न का उत्तर देने से इनकार। (१७९)

(६) जलाशय तथा तालाब को गंदा करना। (२७७)

(७) जन— मार्ग पर तेज़ी से तांगा, गाड़ी मोटर आदि चलाना। (२७९)
(८) जन—मार्ग या जल मार्ग में कोई वाधा उपस्थित कर देना। (२८३)
(९) अग्नि तथा अन्य आग्नेय द्रव्यों को सुरक्षित रूप में न रखना। (२८५)
(१०) विस्फोटक द्रव्यों के संबंध में गलत व्यवहार। (२८९)
(११) पशुओं को सुरक्षित रूप में न रखना। (२८६)
(१२) सार्वजनिक स्वास्थ्य—नाशक अपराध। (२९०)
(१३) सार्वजनिक स्थानों में अश्लील कार्य व गायन। (२९४)
(१४) सामान्य चोट पहुंचाना। (३२३)
(१५) उत्तेजना मिलने पर जानवूझ कर चोट पहुंचाना। (३३४)
(१६) ऐसा काम करना जिससे दूसरों का जीवन खतरे में पड़ जाय। (३३६)
(१७) किसी को अनुचित ढंग से रोकना। (३४१)
(१८) वलप्रयोग (use criminal force)। (३५२)
(१९) किसी व्यक्ति के शरीर से आभूषण या हाथ से किसी वस्तु की चोरी करते समय प्रहार। (३५६)
(२०) किसी व्यक्ति को अनुचित रूप से कैद करते समय उस पर प्रहार। (५५७)
(२१) किसी व्यक्ति द्वारा उत्तेजित किये जाने पर वल-प्रयोग। (३५६)
(२२) वेगार। (३७४)
(२३) ५०) रुपये तक के मूल्य की वस्तु की चोरी। (३७९)
(२४) ५०) रुपये तक के मूल्य की वस्तु का गवन। (४०३)
(२५) ५०) रुपये तक के मूल्य की चोरी की वस्तु का प्राप्त करना। (४११)
(२६) किसी व्यक्ति या सर्वसाधारण अथवा समिति को हानि पहुंचाने के उद्देश से कार्य। (४२६)
(२७) १०) रुपये तक की कीमत के किसी जानवर को मार देना। (४२९)
(२८) आव पाशी के किसी भी साधन को हानि पहुंचाना। (४३०)
(२९) अनाधिकार प्रवेश। (४४७)

(३०) किसी के मकान में अपराध करने के लिए प्रवेश। (४४८)
(३१) शान्तिभंग करने के उद्देश्य से जानबूझकर अपमान। (५०४)
(३२) दबाव या धमकी देना (५०६)
(३३) संकेत, शब्द या कार्य द्वारा स्त्री का अपमान। (५०९)
(३४) मदिरा पान कर सार्वजनिक स्थान में दुराचार। (५१०)

२ जानवरों के अनाधिकार प्रवेश एक्ट नं. १, सन् १८७१ की धारा २० से २४ तक।

३. संयुक्त प्रान्त के ज़िला बोर्डों के प्रारम्भिक शिक्षा—एक्ट नं. १ सन् १९२६ की धारा १० की उपधारा (१)

४. पंचायत-विधान या इसके आधीन बनाये गए किसी नियम के आधीन कोई अपराध।

५. सार्वजनिक रूपसे जूआ-ऐक्ट नं. ३ सन् १८६७ की धारा ३,४, व ७ के आधीन कोई अपराध।

६. यदि किसी अदालत में कोई ऐसा मुक़द्दमा हो, जिसका संबंध भारतीय दण्ड विधान की धारा १४३, १४५, १५१ या १५३ से हो, तो यदि अपराध गंभीर न हो, तो न्याय-पंचायत में सुनवाई के लिये भेजा जा सकता है।

७. यदि किसी व्यक्ति की ओर से सार्वजनिक शान्तिभंग की आशंका हो, तो सरपंच १५ दिन तक के लिए १००) रू० तक के मुचलके ले सकता है।

दण्ड—व्यवस्था

न्याय-पंचायत को कारावास का दण्ड देने का अधिकार नहीं है। वह १००) रू० तक जुर्माने का दण्ड दे सकती है। यदि जुर्माना अदा न किया जाय, तो वह कारावास का दण्ड नहीं दे सकती।

न्याय-पंचायत के अधिकारों की मर्यादा

न्याय-पंचायतें फ़ौजदारी के मामलों में निम्न लिखित मुक़द्दमों की सुनवाई नहीं करेंगी:—

(१) यदि अभियुक्त पहले कभी किसी अपराध के लिये तीन वर्ष या अधिक के लिये कारावास का दण्ड पा चुका हो; या

(२) पहले कभी किसी पंचायती अदालत से चोरी के अपराध में जुर्माने का दण्ड भोग चुका हो; या

(३) अभियुक्त जरायम पेशा जातियों के एक्ट नं. ३ सन् १९११ की धारा ४ के आधीन जरामय पेशा जाति का रजिस्टर्ड मेम्बर हो, या

(४) ज़ाता फौजदारी की धारा १०९ या ११० के आधीन अच्छा चाल-चलन रखने के लिये मुचलका दे चुका हो, या

(५) जुआ खेलने के अपराध में सज़ा मिली हो।

क्षति-पूर्ति और अभियुक्तों की रिहाई

न्याय-पंचायत को यह अधिकार है कि वह यह आज्ञा दे सकती है कि जुर्माने से प्राप्त रक़म का पूरा या आंशिक भाग वादी (मुस्तगीस) के खर्चे की पूर्ति के लिये दे दिया जाय। या किसी साम्पत्तिक हानि की पूर्ति के लिये दे दिया जाय। यदि अभियुक्त पर कोई मिथ्या आरोप साबित हो जाय, तो न्याय-पंचायत वादी से क्षति-पूर्ति स्वरूप रक़म अभियुक्त को देने की आज्ञा देगी।

न्याय-पंचायत ऐसे अभियुक्तों को जिन्होंने प्रथम वार अपराध किया हो और जिनके विरुद्ध किसी घोर अपराध का अभियोग न हो तो प्रथम अपराधी अभयदान क़ानून (First Offenders Probation Act No 6 of 1938) की धारा ४ के आधीन सद्—व्यवहार का मुचलका लेकर उसे मुक्त कर सकती है।

ज़ाब्ता फौजदारी की धारा २०२ के आधीन मॅजिस्ट्रेट द्वारा भेजे गए किसी भी अभियोग की जांच न्याय-पंचायत द्वारा की जायगी और पंचायत जांच के बाद अपनी रिपोर्ट मॅजिस्ट्रेट को भेज देगी।

दीवानी मामलों में अधिकार

यदि किसी मामले में नालिश १००) रु० से अधिक की न हो, तो निम्न

लिखित मामलों में उसकी सुनवाई न्याय-पंचायत में हो सकती है:—

(१) किसी चल-सम्पत्ति संबंधी इक़रारनामें के आधार पर, यदि कोई रक़म अदा करने के योग्य हो।

(२) किसी चल सम्पत्ति (Movable property) या उसकी क़ीमत की वापसी के लिए नालिश।

(३) किसी चल-सम्पत्ति के अनुचित रीति से ले लेने या उसको हानि पहुंचाने के मुआवज़े के लिए नालिश, और—

(४) उस क्षति के लिए नालिश जो जानवरों के अनाधिकार प्रवेश के कारण हुई है।

विशेष अवस्थाओं में प्रान्तीय सरकार के आदेश से न्याय—पंचायतें ऐसी नालिशों की सुनवाई भी कर सकेंगी जो ५००) रु० या उससे कम की मालियत की होंगी।

न्याय—पंचायत के निर्णय

न्याय—पंचायत के निर्णय पांच पंचों की सम्मति से होंगे। यदि वे सब सहमत न होंगे, तो बहुमत से निर्णय होंगे। न्याय—पंचायत के निर्णय अन्तिम होंगे। उन निर्णयों की अपील किसी अदालत में नहीं हो सकेगी।

परन्तु यू. पी. पंचायत राज विधान १९४७ की धारा ८५ के अनुसार हाकिम परगना, मुंसिफ़ और सब डिवीजनल अफ़सर को यह अधिकार है कि वह किसी भी मुक़द्दमे, नालिश या कार्रवाई के संबंध में, किसी पक्ष की प्रार्थना पर या स्वयं ही, मुक़द्दमे, नालिश या कार्रवाई, जैसी भी स्थिति हो, विचाराधीन होने के समय और डिग्री या आज्ञा की तारीख़ से ६० दिन के भीतर, उसके काग़ज़ात पंचायती अदालत से मांग सकता है और उन कारणों के आधार पर जिन्हे वह लिखेगा:—

(१) किसी मुक़द्दमे, नालिश या कार्रवाई के बारे में पंचायती अदालत की अधिकार-सीमा को रद्द कर सकता है। या

(२) पंचायती अदालत की दी हुई किसी डिग्री या आज्ञा को किसी भी दशा

में रद्द कर सकता है। या,

(३) उस मजिस्ट्रेट की अदालत में मामले की सुनवाई हो सकती है।

वकील पर प्रतिबंध

यह वास्तव में भारतीय इतिहास में प्रथम अवसर है जब कि वकील को न्याय-पंचायत के समक्ष किसी भी मुकद्दमे या नालिश की पेरवी करने के अधिकार से वंचित किया गया है। यह वास्तव में उचित ही है। यदि वकील न्याय-पंचायतों में भी पहुंच गये, तो जिस शोषणा से ग्रामीणों की रक्षा करनी है, वे फिर उनके शिकार बन जायंगे।

परन्तु पंचायत-विधान की धारा ८१ के अन्तर्गत दोनों पक्षों को यह अधिकार दिया गया है कि वे अपने पक्ष की सिद्धि के लिये स्वयं न्याय-पंचायत में उपस्थित हों या ऐसे नौकर, हिस्सेदार, संबंधी, या मित्र द्वारा, जिसे उन्होने अधिकार दे दिया हो, वहां उपस्थित हों।



७

शिक्षा और साक्षरता

भारत ग्रामों का देश है। इस देश की ८० प्रतिशत जनता ग्रामों में रहती है। भारत में ब्रिटिश-राज को शासन-व्यवस्था करते १५० वर्ष व्यतीत होगये परन्तु यहां अबतक केवल १२ प्रतिशत व्यक्ति ही साक्षर कहलाने योग्य बन सके। स्त्रियों में साक्षरता तो और भी कम है। इसका मूल कारण यही है कि विदेशी शासन ने इस ओर राष्ट्रीय हित की दृष्टि से शिक्षा-प्रसार का प्रयत्न नहीं किया। शिक्षा-प्रसार की जो भी व्यवस्था की गई, वह जनता में ज्ञान-विज्ञान की ज्योति जगाने के उद्देश्य से नहीं प्रत्युत शासन प्रबंध के संचालन के लिये कर्मचारी और अफ़सर पैदा करने के उद्देश्य से की गई। आजतक अज्ञान के गढ़ इन ग्रामों की करोड़ों की आबादी को प्रकाश देने के लिए कोई योजना तैयार नहीं की गई और यदि इन पिछले वर्षों में राष्ट्रीय शिक्षाविज्ञों के प्रयत्न से कोई योजना तैयार भी हुई, तो उस पर कोई अमल नहीं किया गया।

भारत में जब से कांग्रेस मंत्रि-मंडल स्थापित हुए हैं, तब से और विशेषतः १५ अगस्त १९४७ के बाद-भारत को स्वाधीनता प्राप्त होजाने के बाद—इधर प्रान्तों में अधिक कार्य होने लगा है। कांग्रेस मंत्रि-मंडलों ने प्रथम बार शिक्षा-प्रसार-विभाग (Education Expansion Department) स्थापित कर प्रौढ़ शिक्षा की ओर प्रयत्न किया। अब प्रान्तीय सरकारें दस वर्षीय शिक्षा-योजना तैयार कर इस दिशा में प्रयत्नशील हैं।

ग्राम—शिक्षा की विफलता

भारत में ग्राम-शिक्षा सफल नहीं होसकी— इसके अनेक कारण हैं।

सब से प्रथम तो पूर्व सरकार ने ग्रामों में शिक्षा के प्रसार के लिये कोई उपयोगी योजना नहीं बनाई। उसने नगरों में ही शिक्षा के केन्द्र बनाये। फिर ग्राम-वासियों के लिये उपयोगी शिक्षा की व्यवस्था भी नहीं की गई। इस कारण ग्राम की साधारण जनता शिक्षा से उदासीन ही रही। जमींदार तथा महाजन, जिन्होंने नगरों में ही अपनी कोठियां, बंगले और उद्योग व्यापार खड़े कर रखे हैं, शिक्षा की ओर अधिक आकर्षित हुए। वे अपने पुत्रों को आई. सी. एस., कलैक्टर, मॅजिस्ट्रेट, मुंसिफ, पुलिस अफसर और डिप्टी कलैक्टर बनाने के उद्देश्य से कालिजों व यूनीवर्सिटियों में उच्च शिक्षा दिलाने की व्यवस्था करने लगे।

पंजाब—सरकार के भूतपूर्व ग्राम-सुधार कमिश्नर एफ. एल. ब्रेनी ने वर्त्तमान् ग्राम-शिक्षा-पद्धति की आलोचना करते हुए लिखा है:—

"दुर्भाग्य से अन्य देशों की तरह भारत में भी नगर के विचार, नगर के पाठ्य-क्रम तथा नगर के अध्यापक एक बड़े लम्बे समय से ग्राम-संस्कृति का विनाश कर रहे हैं और शहरी ढंग के जीवन के लिये आकांक्षा पैदा कर रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि ग्राम और उनके रीति-रिवाज, यहां तक कि उनकी वेशभूषा तक घृणा की दृष्टि से देखी जाती है और ग्रामवासी अपनी संस्कृति, मनोरंजन तथा अन्य वस्तुओं के लिये नगरों की ओर ही अधिक आकर्षित होते हैं। ग्रामवासी युवक की यह इच्छा नहीं होती कि वह अपने ग्राम में रह कर

ग्राम-सुधार के लिये प्रयत्न करे, प्रत्युत वह नगरों में ही रहना और नगर के जीवन तथा विचारों को ग्रहण करने में ही अपना सौभाग्य समझता है। वह ग्राम-जीवन की सर्वश्रेष्ठ वस्तुओं की उपेक्षा कर नगर-जीवन की निकृष्ट और हेय वस्तुओं के लिये लालायित रहता है।" [1]

ग्राम-वासी नगर की ओर आकर्षित होते हैं। और इस आकर्षण में वे नगरों की कुटेवों और कुसंस्कारों को ग्रहण कर अपने जीवन को दुःखी बना लेते हैं। इसका कारण समाज द्वारा ग्रामों की उपेक्षा ही है। हम अपने ग्रामों की रचना आकर्षक ढंग से नहीं कर सके। यदि ऐसा किया जाता, तो आज ग्रामों की ओर हमारे नगर-वासी जाने लगते।

ग्रामों में सरकार ने प्राथमिक शिक्षा का परीक्षण किया। परन्तु इसमें उसे सफलता नहीं मिली। प्राथमिक (प्राइमरी) स्कूलों में जिस प्रकार की शिक्षा दी जाती है, वह शिक्षार्थी को किसी भी योग्य नहीं बनाती। यदि चिट्ठी-पत्री पढ़-लिखने भर की योग्यता प्राप्त भी होगई, तो उससे जीवन में सफलता नहीं मिल सकती और न जीवन-सुधार ही संभव है। प्राइमरी स्कूलों के बालकों में २० प्रतिशत बालक ही—चौथी श्रेणी तक शिक्षा पाते हैं; शेष ८० प्रतिशत दूसरी या तीसरी श्रेणी तक ही पढ़-पाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि भारत में प्राइमरी शिक्षा पर जो व्यय किया जाता है, उसका ८० प्रतिशत भाग व्यर्थ में जाता है। इतनी मानव—शक्ति एवं धन का अपव्यय, वास्तव में, एक महान आश्चर्य है।

प्राथमिक शिक्षा की इस विफलता के कुछ कारण निम्न लिखित हैं:—

(१) प्राथमिक पाठशालाओं का विषय वितरण। किसी प्रदेश में अधिक पाठ शालाएँ हैं; किसी में कम।

(२) बालक-बालिकाओं के लिए प्रथक् प्रथक् स्कूल।

(३) सुयोग्य और शिक्षण-प्राप्त अध्यापकों की न्यूनता।

(४) दूषित और अनुपयोगी पाठ्य-क्रम एवं शिक्षा-विधि।

---

1. F. L. Brayne: Better Villages (1937), Ch. XII p. 172.

(५) शिक्षा-प्रणाली में ग्राम-जीवन की आवश्यकताओं का अभाव।

(६) विद्यार्थियों के संरक्षकों का स्कूल से संपर्क का न होना। फलतः शिक्षा के प्रति उदासीनता।

(७) ग्रामों की भीषण दरिद्रता।

(८) प्राथमिक शिक्षा का प्रबंध भी दोषपूर्ण है। ज़िला-बोर्डों के द्वारा इनका प्रबंध होता है, इस लिए दलबन्दियों के कारण शिक्षा का ठीक ठीक प्रबंध नहीं होता।

शिक्षा का प्रयोजन

यदि भारत में प्रजातंत्र—सामाजिक एवं राजनीतिक—की स्थापना हमारा लक्ष्य है, तो यह अत्यंत आवश्यक है कि हम उसकी सफलता के लिये उपयुक्त क्षेत्र तैयार करें। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि इसके लिये नागरिक शिक्षा ही सर्वोत्तम साधन है। हमारी शिक्षा-संस्थाएं ही सच्चे प्रजातंत्र की आधार शिला रख सकती हैं। अतः प्रजातंत्र की सफलता के लिये नागरिकों की शिक्षा की योजना वांछनीय है।

विश्व-युद्ध से पूर्व सन् १९३७ में संयुक्त प्रान्त की सरकार ने शिक्षा के पुनर्संघठन के लिये सुप्रसिद्ध समाजवादी नेता आचार्य नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की थी। इस समिति की रिपोर्ट में लिखा है —

"यदि सच्चे प्रजातंत्र का विकास करना है, तो उसे सब उपायों से सस्ती नेतागिरी में परवर्तित होने से बचाना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि संस्कृति किसी विशेष वर्ग की सम्पत्ति न रहे। इसका जनता में स्वतंत्र रूप से प्रसार होना चाहिए। राष्ट्रीय जीवन के धरातल को उच्च बनाया जाय और जनता को स्वतंत्रता से विचार करने और संयम की शिक्षा दी जाय। इससे वे अपने जीवन में पुरुषार्थ के उच्च आदर्शों की प्राप्ति कर सकें। यदि लोकतंत्र का विवेक एवं सद्व्यवहार के सिद्धान्तों द्वारा मार्ग-दर्शन नहीं किया गया, तो वह पथ-भ्रष्ट हो जायगा और फिर उसके अवांछनीय परिणाम निकलेंगे। इस-लिए यह अतीव अवश्यक है कि हमें शिक्षा का समुचित ढंग से संचालन करना

चाहिए, जिससे वे स्वतंत्र एवं स्वाश्रयी व्यक्तित्व का विकास कर सकें। ऐसी स्थिति में, वे स्वाधीनता, स्वराज्य, शान्ति और सहकारिता के उच्च सिद्धान्तों का पालन करने के लिए प्रयत्न कर सकेंगे।" [2]

यदि हम यह चाहते हैं कि भारत में सच्ची समाजवादी लोकसंचालक व्यवस्था की स्थापना होसके और वह हमारे जीवन में सुख, शान्ति, बंधुत्व तथा लोक-संग्रह की भावना को जाग्रत कर सके, तो क्या हमारा यह कर्तव्य नहीं है कि हम यह देखें कि लोकतंत्र की प्रेरक आकांक्षा विवेकपूर्ण, ज्ञानमय तथा लोकहित-भावना से ओत प्रोत है अथवा वह अज्ञानांधकार, कुसंस्कारों तथा दूषित मनोभावनाओं से ओत प्रोत है। वास्तव में कट्टरता एवं कुसस्कारों से प्रभावित अशिक्षित लोकतंत्र, जो सदैव स्वार्थी और निकृष्ट कोटि के नेताओं के कुचक्र में फंस जाता है शान्ति, सुख एवं सुशासन के लिए एक अधिनायक तंत्र से भी अधिक ख़तरनाक है।

अतः लोकतंत्र को हमें सस्ती नेतागिरी, नैतिक पतन, एवं कट्टर वादिता से रक्षा करने के लिए उसे शिक्षित बनाने का पूरा प्रत्यन करना चाहिए।

एक सुप्रसिद्ध शिक्षा विज्ञ का यह कथन वास्तव में सत्य है कि:—

"सामाजिक एवं नागरिक शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य यह होना चाहिए कि जनता की आलोचना-बुद्धि अधिक शक्तिदायक बने जिससे वे स्वार्थी और सच्चे समाज-सेवक, कट्टरवादिता, जो मानव की पाशविक वृतियों को अधिक तेज़ी से जाग्रत कर देता है, और सत्यता एवं सौजन्य, जो हमारी उच्च वृतियों को उत्तेजन प्रदान करते हैं, के बीच भेद कर सकें। यह वर्तमान समय में प्रौढ़ शिक्षा की समस्याओं में एक महत्वपूर्ण प्रश्न बन गया है क्यों कि अभिव्यक्ति के नूतन एवं शक्तिशाली साधन समस्त विचार स्वातंत्र्य तथा स्वतंत्र निर्णय पर अपना प्रभाव डालते हैं और इस प्रकार सबल एवं प्रभावशाली स्थापित स्वार्थों के लिए यह संभव कर देते हैं कि वे करोड़ों की जनता

2. Report of the U.P. Primary and Secondary Reorganization Committee (1939) p. 11.

में एक नियत नमूने के विचार एवं आचार पैदा कर सकें।"

अखिल भारतवर्षीय प्रौढ़ शिक्षा-सम्मेलन के रीवां-अधिवेशन (दिसंवर १९४७) के सभापति पद से माननीय जस्टिस प्रकाशनारायण सप्रू (सुपुत्र डा० सर तेजवहादुर सप्रू) ने वहुत ही महत्वपूर्ण, विचारपूर्ण एवं सामयिक अभिभाषण दिया था। इस भाषण में उन्होंने प्रौढ़ शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा:—

"हमें अपनी जनता के लिये एक उपयोगी शिक्षा-प्रणाली की व्यवस्था करनी है, जिससे हम जहां कहीं भी वुद्धिमान एवं मनीषी व्यक्ति हों, उनकी खोज कर सकें। इस अर्थ में प्रौढ़ शिक्षा मुख्यतः एक नैतिक प्रश्न वन जाता है। जनता के लिए अपनी कर्त्तव्य परायणता एवं उत्तरदायित्व की भावना को विकसित करना उस समय तक संभव नहीं, जवतक कि उन्हें यह अनुभव न करा दिया जाय कि सदाचार का फल भी श्रेष्ठ होता है।"

इसी प्रसंग में जस्टिस सप्रू ने वतलाया कि:—

"शिक्षा के कर्तव्य की लोकतन्त्रात्मक व्याख्या करने के लिए प्रयत्न की ओर हम एक कारण से प्रेरित हुए हैं। यह हमारे देश का प्रौढ़ वर्ग ही है, जो भावी सरकार की रचना करेगा और जिसके हाथ में महान् राजसत्ता होगी। यह हमारे लिए आवश्यक हो गया है कि हम यह अनुभव करें कि शिक्षा एक ऐसी वस्तु है जो एक अधिकार-सम्पन्न वर्ग की सम्पत्ति नहीं होसकती। क्यों कि इस देश का शासन किसी एक वर्ग या जाति द्वारा नहीं होगा, प्रत्युत देश की समूची जनता द्वारा होगा, और उसमें सभी जातियों एवं वर्गों के लोग सम्मिलित हैं। जनता पर यह दायित्व होगा कि वे उनका चुनाव करें जो उनके लिए शासन करेंगे।"

आपने शिक्षा की उपयोगिता के संवंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा:—

"लोकतंत्र का प्रयोजन उस समय तक सफल नहीं होसकेगा जवतक कि वह जनता में व्यापक प्रसार तथा सामाजिक नियोजन के द्वारा पर्याप्त उत्पादन

एवं वितरणा की व्यवस्था न कर सके और फलतः जीवन को सुखमय बना सके। सामाजिक एकता एव संघठन, जिस पर समाज का कल्याण निर्भर है, उस समाज में प्राप्त नहीं होसकता, जिसने अपने को जातिगत एवं वर्ग-गत कुसंस्कारों से मुक्त नहीं किया है।"

अतः शिक्षा का प्रयोजन है ग्राम वासियों के जीवन-स्तर को उच्च बनाना। अक्षर-ज्ञान ही—शिक्षा का नाम नहीं है। शिक्षा का प्रयोजन है—ग्राम-वासी का शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक उत्कर्ष। यदि शिक्षा ग्राम-वासी को सुसंस्कृत नहीं बनाती, यदि वह उसे नीति का पाठ नहीं पढ़ाती, यदि वह उसे किसी उपयोगी कला-कौशल एवं उद्योग की ओर प्रेरित नहीं करती, यदि वह व्यक्ति की शक्तियों का पूर्ण विकास करने में योग नहीं देती और अन्त में यदि वह सहयोग, बंधुत्व एवं शान्ति का सुखदायक सन्देश नहीं देती, तो उसे हम शिक्षा नहीं कह सकते।

नूतन शिक्षा प्रणाली

उपर्युक्त प्रयोजन की सिद्धि के लिये ही—राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने आधार भूत शिक्षा (बेसिक शिक्षा) के आदर्श को देश के शिक्षा-विदों के समक्ष आज से ८-१० वर्ष पूर्व रखा था। आज तो यह बेसिक-शिक्षा-पद्धति भारतकी शिक्षा-प्रणाली का अंग बन चुकी है। सभी—कांग्रेसी-प्रान्तों में इसका प्रयोग सन् १९३८ से हो रहा है।

बेसिक शिक्षा का उद्देश्य है किसी उद्योग के द्वारा बालक की शारीरिक, बौद्धिक एवं नैतिक शक्तियों का विकास। ग्रामों की जनता तथा नगर की जनता दोनों के लिए समान बेसिक शिक्षा-प्रणाली होनी चाहिए। बेसिक शिक्षा निःशुल्क (Free) हो तथा ७ वर्ष तक उसका शिक्षा-काल हो।

शारीरिक श्रम और एक रचनात्मक उद्योग द्वारा शिक्षा दी जाय। बेसिक शिक्षा का माध्यम प्रान्तीय भाषा होनी चाहिए। संयुक्त प्रान्त, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रान्त, राजस्थान, और पूर्वी पंजाब में शिक्षा का माध्यम हिन्दी होनी चाहिए। संयु प्रान्त में सन् १९४७ से हिन्दी राज भाषा मान ली गई है। मध्य प्रान्त में

भी हिन्दी राज भाषा स्वीकार करली जाय-इसके लिए प्रयत्न हो रहा है। बिहार में भी हिन्दी राजभाषा स्वीकार कर ली गई है। पश्चिमी बंगाल में बंगला, मद्रास में तामिल, तेलगू, मलयालम्; बंबई में गुजराती व मराठी में बेसिक शिक्षा का प्रबंध होना चाहिए।

प्रान्तीय भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा की भी शिक्षा देनी चाहिए। क्यों कि हिन्दी भाषा ही भारतीय राष्ट्र की सामान्य भाषा बन सकती है।

बेसिक शिक्षा के अन्तर्गत निम्न विषयों की भी शिक्षा देनी चाहिए:—

१. प्रथम से चतुर्थ श्रेणी तकः—

(१) बेसिक उद्योग।
(२) हिन्दी।
(३) गणित।
(४) इतिहास, नागरिक शास्त्र और भूगोल।
(५) शारीरिक व्यायाम एवं सफ़ाई।
(६) कला।
(७) विज्ञान

२. पांचवीं से सातवीं श्रेणी तकः—

(१) बेसिक उद्योग।
(२) हिन्दी, भाषा और साहित्य।
(३) गणित।
(४) साधारण विज्ञान (शरीर-विज्ञान, स्वाथ्य-विज्ञान)
(५) कला।
(६) शारीरिक व्यायाम।
(७) सामाजिक अध्ययन।

३. बेसिक उद्योग

पहले पांच वर्षों में प्रत्येक बालक को तकली से सूत-कातना, साधारण खेती, और बागवानी की अनिवार्य शिक्षा दी जाय। नगरों में जहां भूमि न

प्राप्त हो सके वहां खेती की शिक्षा न दी जाय।

शेष दो वर्षों में बालक को निम्न लिखित उद्योगों में से एक उद्योग चुन कर उसे सीखना चाहिए :—

कातना-बुनना; कृषि; कार्ड बोर्ड का काम; लकड़ी का काम: धातु का काम; चमड़े का काम; मिट्टी के बर्तन आदि बनाना; फल व शाकादि की बाग़बानी; बाईसीकिलों की मरम्मत; सिलाई की मशीनों की मरम्मत; ग्रामोफ़ोन और बिजली के सामानों की मरम्मत; बेंत का सामान तैयार करना।

बालिकाओं के लिए गृह-धंधों की शिक्षा देनी चाहिए।

शिक्षा का प्रबंध

अब मुख्य प्रश्न यह है कि शिक्षा का प्रबंध कैसे होना चाहिए। जब भारत में स्थानीय स्वराज्ज संस्थाएँ स्थापित की गईं, तब प्राथमिक शिक्षा का प्रबंध ज़िला बोर्डों तथा म्युनिस्पल बोर्डों को सौंप दिया गया। उसी समय से प्राथमिक शिक्षा का प्रबंध इन्हीं बोर्डों द्वारा हो रहा है। वर्तमान् व्यवस्था यह है कि संयुक्त प्रान्त के प्रत्येक ज़िले में एक स्कूल इन्स्पेक्टर होता है। इसके आधीन डिप्टी इन्स्पेक्टर तथा सब डिप्टी इन्स्पेक्टर होते हैं। ज़िला-बोर्ड तथा म्युनिस्पल-बोर्ड एक-एक शिक्षा-समिति नियुक्त करते हैं। डिप्टी इन्स्पेक्टर पर शिक्षा विभाग तथा ज़िला-बोर्ड व चुंगी दोनों का ही नियंत्रण होता है। बोर्डों में पार्टी-बन्दी के कारण इन शिक्षा-अफ़सरों को भी उस पार्टी को प्रसन्न करने के लिए हर प्रकार का उचित-अनुचित कार्य करना पड़ता है, जो सत्ता में होती है।

इस पार्टी-बन्दी के कारण अनेक सुयोग्य अध्यापकों को नौकरी से हाथ धोने पड़ते हैं और अनेक अयोग्य व्यक्तियों को अध्यापकी मिल जाती है।

यही कारण है कि ज़िला बोर्डों तथा म्युनिसिपल बोर्डों में काम करने वाले शिक्षाधिकारी बोर्डों के चेअरमैनों तथा सदस्यों की चाटुकारिता में, उनके ग़लत कार्यों एवं ग़लत नीतियों की उपयुक्तता सिद्ध करने के लिए, हर समय प्रस्तुत रहते हैं। जो ऐसी चाटुकारिता के अभ्यस्त नहीं होते, उन्हें अवकाश-ग्रहण करने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

हाल में ग्राम-पंचायत राज-विधान द्वारा ग्राम-सभाओं के हाथ में प्राथमिक शिक्षा का प्रबंध दे दिया गया है। पहले यह कार्य ज़िला बोर्डों द्वारा होता था।

अब शिक्षा के क्षेत्र में यह विकेन्द्रीकरण कर दिया गया है। जब हमारे ज़िला बोर्ड और म्युनिसिपल बोर्ड प्राथमिक शिक्षा की सुव्यवस्था करने में सफल नहीं रहे, तब ग्राम-पंचायतें सफल हो सकेंगी, यह कहना कठिन है।

प्रान्तीय शिक्षा-पुनर्संगठन समिति के अध्यक्ष आचार्य नरेन्द्र देव ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से यह मत दिया है कि "प्रान्त के समस्त बेसिक स्कूलों तथा उच्च शिक्षा का प्रबंध एक केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड द्वारा होना चाहिए।" यदि हम शिक्षा को राजनीति की दूषित दलबन्दी और उसके अवांछनीय परिणामों से मुक्त रखना चाहते हैं, तो हमें आचार्य नरेन्द्र देव की शिक्षा समिति की इस सिफ़ारिश को स्वीकार कर प्रान्तीय केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड बनाकर उसकी व्यवस्था करनी चाहिए।

प्रौढ़ शिक्षा

बालकों की शिक्षा के लिये बेसिक स्कूल स्थापित किये जांयगे और उनके द्वारा बालक तथा बालिकाओं को शिक्षा दी जायगी। यह शिक्षा निःशुल्क और अनिवार्य होगी। संयुक्त प्रान्त की सरकार ने १० वर्ष में समस्त जनता को साक्षर बनाने की योजना तय्यार की है और यह योजना जुलाई १९४८ से आरम्भ हो जायगी।

अब जो प्रौढ़ निरक्षर हैं, उनकी शिक्षा का प्रश्न भी महत्वपूर्ण और विचारणीय है। प्रौढ़ शिक्षा का प्रयोजन केवल मात्र यही नहीं है कि एक अध्यापक ग्राम की चौपाल पर एक टिमटिमाते दीपक के प्रकाश में ग्रामीण पुरुषों को क, ख, ग का पाठ पढ़ाये। अक्षर ज्ञान अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक होने पर भी वह साध्य नहीं है। ये लोग किसी न किसी प्रकार टेढ़े मेढ़े हस्ताक्षर बनाना जानते ही अपने को आचार्य समझने लगते हैं।

वास्तव में प्रौढ़-पाठशालाओं की व्यवस्था सुचारु रूप से होनी चाहिए।

इन पाठशालाओं में वे अक्षर-ज्ञान के साथ साथ अपने ग्राम, ज़िले, प्रान्त और देश तथा विश्व की समस्याओं में दिलचस्पी लेना सीखें, उनमें देश के गंभीर प्रश्नों के समझने की जिज्ञासा पैदा हो और वे अपने जीवन के सुधार, ग्राम-सुधार, बालकों की शिक्षा, कन्या-शिक्षा, सहकारिता, विज्ञान एवं नवीन आविष्कारों की उपयोगिता आदि के सम्बन्ध में समुचित जानकारी प्राप्त करें। इन शालाओं में उनके मनोरंजन की भी सामग्री हो। समय समय पर ग्रामोपयोगी विषयों पर व्याख्यान आदि भी कराये जायं। इस प्रकार प्रौढ़ शिक्षा, वास्तव में ग्राम जीवन की शिक्षा होनी चाहिए।

श्री. के. जी. सईदेन ने अखिल भारतवर्षीय प्रौढ़-शिक्षा-सम्मेलन में अपने भाषण में प्रौढ़ शिक्षा के संबंध में एक बात बड़े महत्व की कही है और उसे हम उन्हीं के शब्दों में दुहरा देना चाहते हैं:—

"आज प्रौढ़ शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह नहीं है कि जनता को पढ़ने-लिखने की शिक्षा दी जाय, या उनकी ज्ञान-वृद्धि की जाय, या उनकी कार्य-क्षमता बढ़ायी जाय—यह सब कार्य महत्वपूर्ण हैं—प्रत्युत उनकी सामाजिक एवं नैतिक शिक्षा पर ध्यान देना है; उनमें जीवन के लिए आदर की भावना जगानी है। इसकी शिक्षा सभी धर्मों ने दी है। और उन्हें उन नैतिक तथा आत्मिक मूलों की शिक्षा देनी है, जिन के कारण जीवन सार्थक हो।" [3]

अप्रैल १९३८ में सबसे प्रथम बार, भारत में, बिहार प्रान्त की कांग्रेस सरकार ने साक्षरता-आन्दोलन आरम्भ किया। तत्कालीन बिहार-मंत्रि-मण्डल के शिक्षा-सचिव डा० महमूद ने बड़े उत्साह से इस कार्य को शुरू किया। इसकी सफलता से उत्साहित होकर संयुक्त प्रान्त में भी १५ जनवरी १९३९ को सम्पूर्ण प्रान्त में साक्षरता-दिवस मनाया गया। इस योजना के लिए शिक्षा सचिव माननीय श्री सम्पूर्णानन्द, श्री कर्णसिंह केन (तत्कालीन पार्लमेंटरी सेक्रेटरी) तथा माननीय पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी एम. ए. लन्दन (शिक्षा-

3. Amrit Bazar Patrika, Mr. K. G. Saiyidain's address. 31-12-47.

प्रसार-अधिकारी) धन्यवाद के पात्र हैं। मध्यप्रान्त में वर्तमान् प्रधान-मंत्री माननीय श्री पंडित रविशंकर शुक्ल (पूर्व शिक्षा-सचिव) तथा शिक्षा-सचिव माननीय गोखले तथा माननीय श्री पं० द्वारिका प्रसाद मिश्र के अथक प्रयत्नों के फलस्वरुप प्रान्त में साक्षरता-प्रसार के कार्य में काफ़ी प्रगति हुई है। 'विद्याम-न्दिरों' की योजना के अनुसार प्राथमिक एवं बेसिक शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति हुई है। इसके लिए माननीय पं० शुक्ल जी और उनका मंत्रि-मण्डल बधाई के पात्र हैं।

ग्राम-वाचनालय

साक्षरता, तथा प्रौढ़ शिक्षा की सफलता के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि ग्राम-सभाओं और ग्राम-पंचायतों द्वारा ग्रामों में वाचनालय एवं पुस्तकालय स्थापित किए जायं। पुस्तकालयों में तीन विभाग रहें—प्रौढ़ पुरुषों के लिए, प्रौढ़ा स्त्रियों के लिए तथा बालक-बालिकाओं के लिए। तीनों विभागों के लिए पुस्तकों का चुनाव उचित ढंग से होना चाहिए। हमारी राय में प्रान्तीय सरकार को सुप्रसिद्ध साहित्यकारों, लेखकों व पत्रकारों की एक समिति नियुक्त कर इन वाचनालयों के लिए प्रत्येक विषय की उपयोगी पुस्तकों का चुनाव कर सम्पूर्ण नामावली, लेखकों के नाम सहित, प्रत्येक ग्राम-पंचायत को भेज देनी चाहिए। उनसे यह भी आग्रह किया जाय कि पुस्तकालयों के लिए पुस्तकें इस सूची के अनुसार ही ख़रीदी जायं। यह सूचना इसलिए दी गई है कि उपयोगी तथा उपयुक्त पुस्तकों का चुनाव बड़ा कठिन कार्य है; इसे अध्यापक तो क्या शिक्षा-विभाग के अनेक अधिकारी भी उपयुक्त रीति से नहीं कर सकते।

वाचनालय में दैनिक पत्रों के अतिरिक्त साप्ताहिक तथा मासिक पत्रों की भी आवश्यकता है। स्थानीय पत्र भी मंगाने चाहिए। ग्राम-सुधार, कृषि-सुधार पशु-पालन, गो-पालन, स्वास्थ्य, बाल-शिक्षण आदि विषयं के मासिक पत्र भी

मंगाने चाहिए। *

पुस्तकों का चुनाव ग्राम की आवश्यकता को ध्यान में रख कर करना उचित है। शिक्षा प्रसार-विभाग तथा ग्राम-सुधार-विभाग ने ग्रामों में वाचनालय एवं पुस्तकालय स्थापित किए हैं। परन्तु अभी इस दिशा में बहुत गुंजायश है। काव्य, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति, कृषि, गोपालन, ग्रामोद्योग, चिकित्सा, ज्ञान-कोष, शब्द-कोष, विज्ञान, विश्व-राजनीति आदि विषयों पर उपयोगी और सुन्दर पुस्तकें संग्रह की जायं।



* हमें यह अत्यन्त खेद के साथ लिखना पड़ता है कि हिन्दी जगत में इन विषयों पर चित्रमय सुन्दर उपयोगी पत्र-पत्रिकाएं नहीं के समान हैं। Indian Farming and Physical Culture (U. S. A.) जैसे पत्रों की हिन्दी में बड़ी आवश्यकता है। परन्तु हिन्दी प्रकाशकों को कहानी पुस्तकों और कहानी-पत्रों से ही अवकाश नहीं मिल रहा है। 'स्वास्थ्य' पर भी कोई उच्च कोटि का पत्र हमारे यहां नहीं है।

८

ग्राम-रक्षा

एक युग था जब कि ग्राम चोर, डाकू और अन्य अपराधियों से सर्वथा मुक्त थे; परन्तु आज के युग में तो ग्राम अपराधियों के अड्डे बने हुए हैं। गत-विश्व युद्ध के समय से तो देश में समाज-विरोधी तत्व अधिक बढ़ गया है, जनता का नैतिक धरातल भी गिर गया है और अपराधों की मनोवृति बढ़ गई है। युद्ध काल में भारत में सन् १९४२ का आन्दोलन हुआ; उस समय तोड़ फोड़ अर्थात् विध्वंसात्मक कार्य भी किए गए। इन कार्यों से भारतीय स्वाधीनता की प्राप्ति में सहयता मिली हो-यह कहना कठिन है। परन्तु सामान्य जनता में व्यवस्था व क़ानून के प्रति जो आदर—भाव था, वह बहुत कुछ शिथिल होगया। रहा-सहा पाकिस्तान की रचना और पंजाब, सिंध, सीमा-प्रान्त में भारी नागरिक उपद्रवों के कारण नष्ट होगया।

जिस समय गत सितम्बर १९४७ में भारतीय संघ की राजधानी नई देहली में हिन्दू-मुस्लिम भयानक उपद्रव हुए, उस समय से देश भर में जीवन

और सम्पति महान खतरे में पड़ गई। इन सब भयानक घटनाओं का अन्त सबसे भयंकर और महान् राष्ट्रीय संकट के रुप में हुआ जब कि ३० जनवरी १९४८ को विश्व की महान विभूति, गरीब जनता के प्राण और दलित-पीड़ित मानवता के उद्धारक महात्मा गांधी की एक दुष्ट हिन्दू ने हत्या कर दी। यह वास्तव में हमारे देश के लिए ही नहीं वरन अखिल विश्व के लिए एक महान् क्षति है जिसकी पूर्ति होना कई सदियों तक संभव नहीं।

हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि देश में बढ़ती हुई इस अपराध-मनोवृति को नियन्त्रित करने के लिये तथा ग्राम-वासियों की दुष्टों व अपराधियों से रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि ग्राम-सभाएँ अपने अपने क्षेत्र में 'ग्राम-रक्षक' (Village Guards) का संगठन करें। संयुक्त प्रान्तीय पंचायत राज-विधान के अन्तर्गत गांव की रक्षा, चौकीदारी, और पंचायतों के सम्मन, नोटिस आदि तामील करने के लिए ग्राम-स्वयं-सेवक दल के संगठन की व्यवस्था की गई है।

सयुंक्त प्रान्त की सरकार १२ लाख नागरिक सैन्य (National Milltia) का भी आयोजन कर रही है। आज के ज़माने में अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में और राष्ट्रीय क्षेत्र में भी आत्मरक्षा के लिए देश तथा नागरिकों को तैयार होना चाहिए।

इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि सरकार की ओर से पर्याप्त मात्रा में रायफलें, तमंचे तथा बन्दूकें नागरिकों को देने की व्यवस्था की जाय और उन्हें ट्रेनिंग की भी सुविधाएँ दी जायं, जिससे अवसर आने पर वे अपनी आप रक्षा कर सकें।

पूर्वी-पंजाब की सीमा पर जो ज़िले हैं, उनमें रहने वाली जनता का जीवन व सम्पत्ति अरक्षित है। पश्चिमी तथा पूर्वी पंजाब के मध्य में कोई स्वाभाविक सीमा व बाधा नहीं है। इसी कारण आजकल भी वहां झगड़े, चोरी, लूटमार तथा नारी-अपहरण की घटनाएँ होती रहती हैं।

इन सीमान्त ग्रामों की रक्षा के लिए भी ग्राम-रक्षकों की आवश्यकता है।

पाकिस्तान राज्य में, पश्चिमी पंजाब के पूर्वी पंजाब की सीमा के निकट वाले ज़िलों में लाखों की संख्या में पठान एकत्रित किए जा रहे हैं; उन्हें रायफ़लें तथा बन्दूकें दी जा रही हैं। इस कारण भी पूर्वी पंजाब के ग्राम भय से आतंकित हैं।

हमारी सम्मति में ग्राम-रक्षक प्रत्येक ग्राम में संगठित किये जायं। इसका संचालन व नियंत्रण प्रान्तीय सरकार के आधीन हो, जिस प्रकार पुलिस प्रान्तीय सरकार के आधीन है।

ग्राम-रक्षक पंचायत की सम्पत्ति, सरकारी सम्पत्ति तथा स्कूल, अस्पताल, शिशु-केन्द्र, मातृ-मन्दिर आदि की रक्षा करें तथा ग्राम में शान्ति क़ायम रखें।

ग्राम-पंचायतें स्वयंसेवक दलों तथा स्काउटों का भी संगठन करें जो सार्वजनिक उत्सवों, मेलों, प्रदर्शनियों आदि के समय जन-सेवा का कार्य करें। इनका नियंत्रण ग्राम-सभा के आधीन रहे।



१

ग्राम में स्वास्थ्य और सफ़ाई

एक समय था जब कि भारतीय ग्राम सुख-समृद्धि के आगार थे। उस समय ग्रामों में प्रत्येक निवासी को गेहूं, चावल, दूध, घी, मक्खन, तथा फल और शाक इत्यादि यथेष्ट मात्रा में उपलब्ध थे। उस दशा में उनके शरीर में इतनी शक्ति थी कि वे रोगों से मुक्ति पाने में समर्थ थे। परन्तु आज स्थिति इसके विपरीत है। नगरों में अच्छा गेहूं ग्राम की अपेक्षा सस्ता मिलता है; दूध और घी भी मिल जाता है। परन्तु ग्रामों में जनता को ये पौष्टिक द्रव्य नहीं मिलते। धनी–सम्पन्न मुट्ठी भर लोग ही इनका उपभोग करते हैं। साधारण जनता इनके भोग से वंचित रहती है। अतः पौष्टिक एवं शुद्ध आहार के अभाव में ग्राम-वासियों का स्वास्थ्य भी गिर गया है। ग्रामों में रोगों का प्रकोप आये दिन होता रहता है। प्रान्तीय स्वास्थ्य–विभाग तथा ज़िला बोर्ड ग्रामों में स्वास्थ्य एवं सफ़ाई के प्रति उदासीन रहे हैं। इसका फल यह हुआ कि ग्राम-वासियों में कुछ ऐसे कुसंस्कार और कुटेवें पैदा हो गई कि जिनके कारण ग्राम और भी गंदे बन गये।

आप किसी भी ग्राम में प्रवेश कीजिए, तो उसकी सीमा पर सबसे पहले मेहतरों, कंजरों तथा अन्य जरायम पेशा जातियों के खण्डहर जैसे निवास स्थान दिखलाई देंगे। ये इतने अशुद्ध एवं गंदे होते हैं कि इनमें कोई भी सभ्य व्यक्ति एक क्षण के लिए ठहर नहीं सकता। फिर दलित कहलाने वाली दूसरी जातियों के लिए अलग हिस्सा होता है। यह भाग भंगी-टोला से कुछ अच्छा होता है। परन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से यह भी कम गंदा नहीं होता। सवर्ण हिन्दुओं के रहने के मकान, विशेषतः जमींदारों, उनके संबंधिओं तथा धनी पुरुषों के मकान और गांव का हिस्सा स्वच्छ होता है।

स्वच्छता

ग्राम-वासियों को सफ़ाई के लिए सबसे अधिक ध्यान देना चाहिए। सबसे पूर्व वे अपने शरीर, वस्त्रों तथा मकान की सफ़ाई करें। मन को भी निर्मल रखें। कभी द्वेष तथा दूषित विचारों को मन में स्थान न दें। मकान की रचना भी ऐसी हो कि वह स्वच्छ रहे। मकान को स्वच्छ रखने का मतलब यह नहीं है कि उसका कूड़ा-कचरा मकान के सामने मैदान या गली में बखेर दिया जाय। अपने मकान के बाहर भी उतनी ही सफ़ाई रखनी चाहिए जितनी कि भीतर।

मकान, खेत, गली, मैदान, कूप, तालाब आदि सभी स्थानों को साफ़ रखना चाहिए। सफ़ाई रखने के संस्कार बाल-काल में ही बच्चों में डालने चाहिए।

गोबर, कूड़े-कचरे आदि को ग्राम के मेहतर ग्राम के पास ही जमा कर देते हैं। यदि इसे गढ्ढ खोद कर जमा करें, तो इससे खाद पैदा हो, जिससे खेती में लाभ होगा।

ग्राम-पंचायतों को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि जिससे ग्राम-वासियों को स्वास्थ्य तथा सफ़ाई के सिद्धान्तों, नियमों तथा विधियों का ज्ञान मिले। इसके अनेक साधन हैं। स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों द्वारा स्वास्थ्य व सफ़ाई पर व्याख्यानों का आयोजन कराया जाय; मैजिक लेन्टर्न द्वारा व्याख्यानों को रोचक बनाया जासकता है। रेडियो, चित्रपट (Cinema), पुस्तक तथा

साहित्य द्वारा भी इसकी शिक्षा दी जासकती है।

इन भाषणों व व्याख्यानों आदि में कोई गंभीर वैज्ञानिक व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे व्याख्यान अत्यंत सरल हों और उनमें ग्राम-जीवन से संबंधित बातों की सरल भाषा में चर्चा हो; जैसे—मनुष्य संयम एवं सफ़ाई से अपने स्वास्थ्य को कैसे सुधार सकता है? सफ़ाई से रोगों को कैसे दूर कर सकता है? भोजन में कौन-सी वस्तुएं खानी चाहिए और कौन कौन-सी क्यों नहीं? भोजन कब और कितना खाना चाहिए? शुद्ध आहार के लाभ? गंदे, सड़े अन्न तथा गले-सड़े फल एवं बासी सब्ज़ी से हानियां? मादक-द्रव्यों शराब, भांग, गांजा से क्या क्या हानियां होती हैं? स्वास्थ्यप्रद मकान कैसे बनाने चाहिए? पशुओं के स्थान कैसे हों? मच्छड़ों से मलेरिया कैसे फैलता है? मच्छड़ों से कैसे रक्षा की जाय? चूहों से जनता को क्या क्या हानियां हैं? इत्यादि।

जल की व्यवस्था

ग्रामों में पीने के लिए पक्के और स्वास्थ्यप्रद जल कूपों की सुव्यवस्था नहीं है। ऐसे ग्राम कम नहीं हैं, जहां लोगों को कूओं के कारण कष्ट है। मद्रास प्रांत में तो ग्रामों में लोग तालाबों का जल पीने के काम में लाते हैं।

ग्राम-सभाओं को स्वच्छ जल की व्यवस्था करनी चाहिए। इसके लिए स्वच्छ स्थानों पर पक्के कूप बनाये जायं। इन कूओं से सब जातियों को पानी भरने का समान अधिकार होना चाहिए। क़ानून द्वारा अस्पृश्यता का नाश तो होगया है, परन्तु अभी तक व्यवहार में, ग्रामों में, समाज पर अस्पृश्यता का व्यापक प्रभाव है। आज भी ग्रामों में सवर्ण हिन्दुओं के जल कूप या तालाब प्रथक् हैं और दलित जातियों के अलग कुए हैं। दलित जातियों के कुए प्रायः कच्चे और गंदे होते हैं। सयुंक्त प्रान्त की सरकार ने अपने Reclamation विभाग द्वारा दलित जातियों के कूप निर्माण का कार्य आरम्भ किया है। हरिजन-सेवक संघ ने भी जल-कूपों के निर्माण में प्रशंसनीय कार्य किया है। परन्तु हमारी सम्मति में प्रत्येक ग्राम के सभी सार्वजनिक कूप समस्त

जातियों—ब्राह्मण से लेकर भंगी तक-के लिए खुल जाने चाहिए।

प्रत्येक ग्राम में सार्वजनिक कूपों के निकट ही स्त्रियों व पुरुषों के लिए स्नानागार बनाये जायं। वस्त्रादि कूपों पर न धोने चाहिए। इनके लिए कूप के पास,एक स्थान बना दिया जाय।

शुद्ध और पौष्टिक भोजन

ग्राम-पंचायत का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वह अपने-क्षेत्र में ग्राम-वासियों के लिए शुद्ध अन्न, दूध, घी, मक्खन आदि की व्यवस्था करे। प्रत्येक ग्रामवासी की आवश्यकता, पूर्ति होने के बाद ही अन्नादि की बिक्री, क्षेत्र के बाहर या नगर में की जाय। जो लोग किसान हैं, उनके पास तो अन्न संग्रह होता है। लेकिन ग्रामों में जो लोग दूसरे काम धंधे करते हैं, उन्हें किसानों से ही अन्न मिल सकता है। इसलिए पंचायत को इसकी देखरेख रखनी चाहिए कि ऐसे लोगों को उचित दामों पर अन्न मिल जाय। यदि कोई गला-सड़ा अन्नादि मनुष्यों के खाने के लिये बेचे तो इसके रोकने के लिए पंचायत को प्रबंध करना चाहिए।

रोगों का प्रतिकार

मनुष्य को जितने भी रोग होते हैं, वे सब स्वास्थ्य एवं सफ़ाई के नियमों के उलंघन तथा अज्ञानता के कारण ही होते हैं। इसलिए ग्राम-वासी जितनी सतर्कता के साथ स्वास्थ्य एवं सफ़ाई के नियमों का पालन करेंगे, वे उतना ही इन रोगों का प्रतिकार करने में सफल होंगे।

अनेक रोग संक्रामक होते हैं। इसका मतलब यह है कि ऐसे रोग स्पर्श (छूत) के कारण दूसरे लोगों पर भी आक्रमणा करते हैं। मलेरिया, हैज़ा, प्लेग, चेचक, क्षय, (तपेदिक्), कोढ़, उपदंश, सुज़ाक, खाज तथा खुजली। मलेरिया अथवा प्लेग और हैज़ा जब अपना भीषण प्रकोप करते हैं, तब ग्राम के ग्राम साफ़ हो जाते हैं।

इन सब रोगों से बचने का एक मात्र उपाय यह है कि मनुष्य को शुद्ध आहार पर्याप्त मात्रा में ग्रहण करना चाहिए। आहार की मात्रा अधिक या कम

होने अथवा अधिक आहार के कारण क़ब्ज़ आदि हो जाती है। बस इसी से बुख़ार, सर दर्द, अपाचन आदि रोग हो जाते हैं। साधारण रोग में उचित उपचार न करने तथा पथ्य न करने से भी रोग भयंकर रूप धारण कर लेते हैं।

ग्राम की सफ़ाई

समूचे ग्राम की सफ़ाई पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि सब लोक अपने अपने मकान की सफ़ाई भी करलें, तब भी सारे ग्राम की सफ़ाई उस समय तक संभव नहीं, जबतक कि उसकी गली, मैदान, नालियों, टट्टियों तथा मूत्र-स्थानों की सफ़ाई न की जाय। यह कार्य स्वास्थ-विभाग के अन्तर्गत मेहतरों को करना चाहिए। मूत्र जहां-तहां गली में या चौक में करना ठीक नहीं। गांवों में पक्की नालियां बनाई जायं और नालियों में मूत्र तथा गंदा पानी बहा देना चाहिए।

ग्रामों में शौच करने की विधि बहुत ही दूषित है। पुरुष और स्त्रियां खेतों में बैठ जाते हैं। मल-मूत्र मार्ग में जाने वाले के पैरों से लग जाता है। स्त्रियों के लिये कोई परदा नहीं होता। यदि ग्रमवासी गड्ढे खोद कर उनमें टट्टी करें और उसे मिट्टी से ढक दें, तो इससे वायु भी शुद्ध रहेगी और ४-५ महीने बाद उन्हें खाद भी मिल जायगा। पर्दे के लिए गड्ढों के चारों ओर टट्टी लगा सकते हैं। जब एक गड्ढा भर जाय, तब दूसरा खोद लें।

मकानों की रचना

ग्रामों में मकान बहुत ही बेढंगे बने होते हैं। यद्यपि ग्राम की आबादी में स्थान की कमी नहीं, फिर भी मकान छोटे और संकुचित बनाये जाते हैं। मकान अधिकांश में कच्चे होते हैं। लोग इतने दरिद्र हैं कि एक-दो कोठरी में ही अपने सब काम कर लेते हैं—रसोइयां, शयन-गृह, अतिथ-गृह, स्टोर, प्रसूति गृह, आदि सब दो-एक कोठरियों में ही होते हैं, जिनमें प्रकाश और वायु के प्रवेश की सख़्त मनाई होती है, ऐसा है भारत के ग्राम-वासियों का विधान।

ग्राम-पचायतों को चाहिए कि वे सहकारी ढंग पर अच्छे स्वास्थ्यप्रद मकानों के बनाने का प्रबंध करें। प्रान्तीय सरकार को इस कार्य में सहायता

देनी चाहिए ।

ग्रामों में दलित जातियों और विशेषतः मेहतरों के मकान अत्यन्त दूषित और स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यन्त हीन दशा में हैं, वैसे भी उन्हें ग्राम का निकृष्ट भाग अपने झोंपड़े बनाने के लिए दिया जाता है। पंचायत और सरकार को चाहिए कि वे इनके मकानों की व्यवस्था करें। पंचायत का यह भी क़र्तव्य होना चाहिए कि कोई व्यक्ति जो आवादी में स्थायी रुप से रहता है, उसे कोई भी वलपूर्वक नहीं निकाल सकता।

ग्राम चिकित्सालय

प्रत्येक ग्राम-क्षेत्र में ग्राम-चिकित्सालय होने चाहिए, जिनमें ग्राम-वासियों की सामान्य चिकित्सा का सुप्रबंध हो। अनेक प्रान्तों में प्रान्तीय सरकारों ने आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को स्वीकार कर वैद्यों तथा हकीमों को डॉक्टरों के समान रजिस्टर्ड करने की व्यवस्था की है और ग्रामों में चिकित्सालयों के खोलने की व्यवस्था भी की है। परन्तु ये अभी अपर्याप्त हैं।

इन चिकित्सालयों में निःशुल्क चिकित्सा का प्रबंध होना चाहिए।

शिशु—केन्द्र और प्रसूति-मन्दिर

शिशु ही देश के भावी नागरिक हैं। अतः शिशु-मंगल (Child Welfare) के कार्य में पूरी दिलचस्पी लेनी चाहिए। शिशुओं के स्वास्थ्य की पूरी पूरी संभाल इन केन्द्रों में होनी चाहिए। माताओं को शिशु स्वास्थ्य की रक्षा के सबंध में हर प्रकार की सलाह देते रहना इन केन्द्रों का मुख्य कार्य हो।

इनके साथ ही प्रसूति मन्दिर भी स्थापित किए जायं, जिनमें प्रसूता की देखभाल, जांच तथा उसके उपचार की पूरी व्यवस्था हो। धायी कर्म की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

हमारे देश में सुसभ्य परिवारों तक में भी अपढ़ तथा अशिक्षित Untrained) दाइयां धायी कर्म करती हैं। ये बड़े अशुद्ध ढंग से अपना म करती हैं, और कभी कभी प्रसूता के जीवन तथा कभी कभी शिशु के वन का अन्त भी इनकी मूर्खता से हो जाता है।

अतः शिक्षित धाइयों द्वारा ही धायी कर्म का संपादन किया जाना उचित है। स्वस्थ्य विभाग को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

ग्रामों में मेले आदि के अवसरों पर शिशु-प्रदर्शनी का आयोजन किया जाय और सर्वश्रेष्ट बालक की माता को पुरस्कार भी दिया जाय। नगरों में भी ऐसे आयोजन हों।

व्यायाम-शालाएँ

ग्राम-पंचायतों का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वे ग्रामवासियों के स्वास्थ्य को ठीक बनाये रखने के लिए शारीरिक व्यायाम (Physical Culture) की व्यवस्था करें। ग्रामों में अखाड़े खोले जायं, युवक तथा बालक व्यायाम करें, दौड़ करें तथा विविधि प्रकार के खेलों का आयोजन करें।

यह हर्ष का विषय है कि देश के शिक्षा-विज्ञ तथा प्रान्तीय शिक्षा-विभाग शिक्षा-पद्धति में शारीरिक व्यायाम का महत्व भी स्वीकार करने लगे हैं। संयुक्त प्रान्त की सरकारने प्रान्तीय शारीरिक व्यायाम परिषद् (Council of Physical Culture) स्थापित कर दी है, जिसके सुयोग्य संचालक श्री माथुर बड़ी दिलचस्पी के साथ प्रान्त के युवक-समाज में व्यायाम-मनोवृति पैदा करने में प्रयत्नशील हैं। इस परिषद् ने थोड़े ही समय में उपयोगी कार्य किया है। हम अशा करेंगे कि अन्य प्रान्तीय सरकारें भी इसका अनुसरण करेंगी।



१०

ग्रामोद्योग और शिल्प

हमने इस पुस्तक के प्रथम अध्याय में प्राचीन-काल के ग्रामों पर जो प्रकाश डाला है, उससे यह स्पष्ट है कि उस समय के ग्राम, वास्तव में आदर्श ग्राम थे; क्योंकि वे आधुनिक अर्थ में पूर्ण स्वतंत्र एवं स्वाश्रयी थे। उस युग के ग्राम बड़े बड़े उद्योगों के केन्द्र थे। परन्तु समय ने पलटा खाया और आज हम ग्रामों को—उत्पादन के केन्द्र होने पर भी-नगरों की आर्थिक- नीति पर निर्भर देखते हैं। आज के किसान देश की सम्पत्ति का उत्पादन तो करते हैं, परन्तु फिर भी आज वे महा दरिद्र हैं। इसका कारण है हमारे देश की ग़लत आर्थिक नीति और दूषित समाज संघठन।

हमारे देश के राष्ट्रीय नेताओं तथा अर्थ-शास्त्रियों का यह विचार है कि देश की आर्थिक-प्रणाली में औद्योगीकारण (Industrialisation) के साथ साथ-ग्रामोद्योगों का भी विकास करना चाहिए। भारतीय-संघ के प्रधान-मंत्री माननीय पं. ज़वाहरलाल नेहरु इसी नीति के समर्थकों में से हैं।

ग्रामों में जो व्यवसाय लोग करते हैं, उन्हें हम तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं:—

१. कृषि और उससे संबंधित उद्योग।

२. गृह-उद्योग।

३. व्यापार।

ग्राम के सभी लोग खेती नहीं करते। खेती के अतिरिक्त और भी धंधे हैं, जिनका खेती से संबंध है। पशु पालन, गो पालन, चर्म-उद्योग, बाग़वानी, सब्ज़ी का उत्पादन, जंगलात के धंधे।

गृह उद्योगों में निम्नलिखित धंधे सम्मिलित हैं:—

सूत कातना, कपड़े बुनना, दरी तथा ग़लीचे बुनना, कम्बल बुनना, काग़ज़ बनाना, तेल पेरना, धान से चावल तैयार करना, गुड़ तैयार करना, मधुमक्षिका पालन, साबुन बनाना, पनचक्की, मुर्ग़ियां पालन, बढ़ई का काम, लुहार का काम, बीड़ी बनाना, बेंत तथा बांस के सामान तैयार करना, मिट्टी के बर्तन बनाना, रस्सी बनाना, टायल बनाना, ईंटों के भट्टे, चूड़ियों का काम, कांच का काम।

इन तथा इसी प्रकार के अन्य उद्योगों का संगठन यदि सहकारी ढंग पर किया जाय और उसके लिए कारीगरों को आवश्यक शिक्षा दी जाय, तो यह गृह-शिल्प आशातीत उन्नति कर सकता है। युद्ध-काल में मिलों से तैयार वस्त्रों पर नियंत्रण होने तथा राशन होने के कारण हाथके कर्घे द्वारा पर्याप्त मात्रा में वस्त्र तैयार किए गए। हम अनुभव के आधार पर यह कह सकते हैं कि वे मिल के कपड़ों से अधिक टिकाऊ और सुन्दर होते हैं। परन्तु मिल के कपड़े की अपेक्षा उनका मूल्य तिगुना या दूना होता है।

यदि इस हस्त-वस्त्र-कौशल को उचित प्रोत्साहन दिया जाय, तो इससे ग्रामों की आवश्यकता पूरी हो सकेगी। और जो कमी होगी, वह मिल के वस्त्रों से पूरी हो जायगी।

इसी प्रकार शिक्षा का प्रसार होने पर काग़ज़ की भी अधिक आवश्यकता

पड़ेगी। ग्रामों में कागज़ के निर्माण का कार्य भी भली भांति किया जासकता है।

यदि यह सब ग्रामोद्योग सहकारी समितियां बना कर किये जायं, तो इससे अधिक उत्पादन होगा और लाभ भी अधिक होगा।

पंजाब ग्राम-सुधार के पूर्व कमिश्नर एफ. एल. ब्रेनी (जो ग्राम-सुधार के एक विशेषज्ञ हैं और जिन्होंने इस विषय पर उपयोगी पुस्तकें भी लिखी हैं) का यह मत है:—

"बड़े पैमाने पर उत्पादन और यंत्र - शक्ति के मुकाबले ग्रामोद्योगों एवं हस्त शिल्प का पुनर्जीवन करना है, तो यह केवल सहकारिता (Co-operation) के आधार पर ही संभव है। सहकारी संस्थाओं का संगठन औज़ारों, कच्चे माल तथा धन प्राप्ति के लिए किया जा सकता है। इसके साथ ही यह सहकारी समितियां माल तैयार करने की प्रणाली में सुधार एवं बिक्री की सुव्यवस्था के लिए भी संगठित की जायं। यदि इन ग्रामोद्योगों का संगठन इस प्रकार नहीं किया गया, तो गृह-शिल्पी या तो अपने व्यवसाय से हाथ धो बैठेंगे अथवा दलाल, महाजन और व्यापारी उनके लाभ को हड़प जायंगे तब शिल्पी पहला जैसा ही दरिद्र रह जायगा।"[1]

अतः यदि देश की आर्थिक प्रणाली में शिल्प, ग्रामोद्योग तथा हस्त-कौशल्य की उन्नति होना आवश्यक है, तो इसके लिए सच्चे सहयोग की स्थापना की जाय। चीन, जापान, जर्मनी, डेनमार्क, बेलजियम आदि देशों में सहकारिता के द्वारा उद्योग धंधों ने पर्याप्त उन्नति की है। यदि हमारे देश में भी सहकारी समितियां (Co-operative Societies) स्थापित करके कार्य किया जाय तो सफलता मिल सकेगी।



1. F. L. Brayne: Better Villages p. 164.

११

सहकारी समितियां

हमारे देश में, ब्रिटिश सरकार ने, ग्राम-स्वराज्य का विनाश कर के सहकारिता (Co-operation) आन्दोलन का आरम्भ आज से २०-२५ वर्ष पहले किया था। आरम्भ में यह सरकारी-समितियां किसानों तथा ग्राम-वासियों को ऋण देने के लिए सहकारी बैंकों के रूप में ही काम करती थीं। बाद में अन्य उद्योगों तथा व्यापार-व्यवसाय के संचालन के लिए भी सहकारी समितियां खोली गई। यद्यपि भारत में सहकारी आन्दोलन काफ़ी पुराना है; परन्तु यह न तो लोकप्रिय बन सका और न इससे देश का कोई हित ही हुआ।

इसका कारण यह है कि सहकारिता आन्दोलन भारतीय जनता का राष्ट्रीय आन्दोलन नहीं, प्रत्युत ब्रिटिश सरकार द्वारा लादा गया आन्दोलन है। इसलिए जनता का इसमें दृढ़ विश्वास नहीं है।

सहकारिता, वास्तव में, देश के लिए एक वरदान सिद्ध हो सकती है, यदि सद्भावना, सच्चाई और पारस्परिक संघठन से इसे सफल बनाने के लिए

जनता प्रयत्न करे। सहकारिता एक ऐसी प्रणाली है जो हम को संघठन, एकता, अनुशासन, स्वाश्रयता, और स्वराज्य की कुञ्जी देती है।

सत्य तो यह है कि सहकारिता का जन्म मनुष्यों के हृदय में होना चाहिए; उनमें सहयोग से काम करने की भावना एवं अभिलाषा इतनी प्रबल होनी चाहिए कि व इसके लिए पूर्णरूप से तत्पर हों।

उसका सिद्धान्त पारस्परिक सहायता तथा त्याग पर स्थिर है। सहकारी समिति के प्रत्येक सदस्य को सच्चाई व ईमानदारी के साथ व्यवहार करना चाहिए। सब मिल कर काम करें और जो लाभ हो उसका न्यायपूर्वक परस्पर वितरण कर लें।

यदि ग्रामों में सहकारिता के प्रसार के लिए निम्न प्रकार की समितियां स्थापित की जायं, तो इससे लाभ होगा:—

(१) जीवन-सुधार सहकारी समितियां (Better Living Societies) इस प्रकार की समितियां ग्राम-सुधार के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकेंगी। यह समितियां विवाह आदि अवसरों पर अपव्यय के निवारण, ग्राम की सफ़ाई, जनता की अस्वास्थ्यप्रद आदतों के सुधार, ग्राम में खेलों की व्यवस्था आदि का काम कर सकती हैं।

(२) पशुपालन-समितियां (Cattle Breeding Societies) खेती के लिए बैल आदि की बड़ी आवश्यकता पड़ती है। इनके ख़रीदने में किसान को बहुत धन व्यय करना पड़ता है। यदि ग्रामवासी पशुपालन-समितियां बना लें तो बड़ी आसानी के साथ अच्छी नस्ल के बैल पैदा हो सकेंगे।

(३) गोपालन—समितियां (Dairy farming Societies) गायों, बकरियों आदि के वैज्ञानिक ढंग से दूध निकालने, अधिक दूध पैदा करने की विधि से इसमें सुधार हो सकता है।

(४) कृषि-भूमि एकीकरण समितियां (Consolidation of Holdings Societes) ग्रामों में किसान अपनी अपनी जोत को सम्मिलित रूप में जोत-बो सकते हैं। इससे खेतों की सिंचाई भली-भांति हो सकती

है और फलतः पैदावार में भी वृद्धि होसकती है।

इनके अतिरिक्त अन्य उद्योगधंधों के लिए भी सहकारी समितियां बनाई जा सकती हैं।



१२

मनोरंजन और उसके साधन

ग्रामवासियों का जीवन दिन-रात परिश्रम करने में ही व्यतीत होता है। वे मनोरंजन नाम की वस्तु को जानते भी नहीं। ग्रामों में कभी-कभी मेले तथा नाच-गायन होते हैं; परन्तु उनकी व्यवस्था उचित ढंग से नहीं की जाती। अतः उनसे मनोरंजन के स्थान में शारीरिक और आर्थिक हानि ही होती है।

आजकल ग्रामों में मनोरंजन के जो साधन हैं, वे इतने दूषित और अनैतिक हैं, कि उनके द्वारा वे कुमार्गगामी बन जाते हैं। रासलीला, नशेबाज़ी, जूआरख़ोरी, होलिकोत्सव पर अश्लीलता, वेश्या-नृत्य, नौटंकी आदि। जो ग्राम नगरों के आस-पास हैं, उनके निवासी नगरों के सम्पर्क में रहने के कारण सिनेमा में अपना धन फूंकते हैं।

मनोरंजन के यह सभी साधन, जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है, ग्राम-वासियों को आर्थिक, शारीरिक एवं नैतिक अधःपतन की ओर ले जाते

हैं। अतः ग्राम-पंचायतों को चाहिए कि इस प्रकार के मनोरंजन के साधनों के बहिष्कार का पूरा प्रयत्न करें और उनके स्थान पर शरीर, मन तथा सामाजिक जीवन को उन्नत बनानेवाले सुरुचि-पूर्ण मनोरंजन तथा आमोद-प्रमोद की व्यवस्था करें।

ग्राम-पंचायतें निम्न प्रकार के मनोरंजन के साधनों के द्वारा ग्रामवासियों के मनोरंजन का प्रबंध कर सकती हैं:—

(१) संगीत-सम्मेलन

संगीत मनोरंजन का एक श्रेष्ठ साधन है। लोग वेश्याओं के पास गायन सुनने के लिए जाने लगते हैं; फिर उनके कुचक्र में फंस कर अपनी बुद्धि तथा शरीर को भी दूषित कर घर को बरबाद कर डालते हैं। इसलिए ग्राम-वासियों को संगीत-गायन का प्रचार करना चाहिये। जिससे लोग इस दूषित-चक्र से बच सकें। अब तो संगीत (Music) हाई स्कूल के छात्रों एवं छात्राओं के लिये पाठ्य-क्रम का ऐच्छिक विषय स्वीकृत हो गया है। संगीत-शिक्षा के लिए गायन-शालाएँ स्थापित हो गई हैं, जिनमें गायन-वादन की शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। ग्राम-पंचायतों को प्रसिद्ध संगीतज्ञों को विशेष अवसरों पर आमंत्रित कर इसका प्रचार करना चाहिए।

(२) रेडियो तथा ग्रामोफोन

आधुनिक समय में रेडियो, न केवल मनोरंजन का ही एक सबल साधन बन गया है, प्रत्युत प्रचार व प्रकाशन का भी यह एक अद्वितीय साधन होगया है। जब से भारत में स्वाधीन शासन की स्थापना हुई है और रेडियो विभाग, माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल के आधीन आगया है, तबसे इसके प्रोग्राम-कार्यक्रम में काफ़ी सुधार हुआ है। अब हिन्दी के गायनों की भाषा तथा भाव में भी पर्याप्त सुधार होगया है। ग्राम-वासियों की सुविधा के लिए ग्रामोपयोगी संगीत, गायन, भाषण और नाटक अदि की भी रेडियो स्टेशनों द्वारा व्यवस्था की जाती है। अमेरिका (संयुक्त राज्य) में प्रत्येक गृह में रेडियो-सेट होते हैं। रेडियो एक आवश्यक चीज़ बन गया है। हमारे देश में भी इसका

६

प्रचार पहले की अपेक्षा अधिक होगया है। परन्तु अभी इनका मूल्य अधिक है। आजकल ४०० या ५०० रुपये में रेडियो-सेट मिल जाता है। यदि पंचायतें इसके लिए चंदा करके धन-संग्रह कर लें और प्रान्तीय सरकारें भी कुछ सहायता दे सकें, तो यह कार्य आसानी के साथ होसकेगा। समाचार-पत्रों की अपेक्षा प्रचार का यह साधन भी उत्तम रहेगा। यदि भारत की प्रत्येक ग्राम-पंचायत अपने पंचायत-भवन में एक रेडियो-सेट का प्रबंध कर ले, तो इससे जनता को देश और संसार के समाचार भी मिल सकेंगे।

परन्तु इसके लिए विद्युत की आवश्यकता होगी। बैटरी द्वारा भी काम चल सकता है। परन्तु जबतक ग्रामों में बिजली का प्रबंध न हो, तबतक इसमें सुगमता नहीं रहेगी। ग्राम-पंचायतों को अपने यहां ग्रामोफ़ोन तथा लाउड स्पीकर भी रखने चाहिए। ग्रामों की जनता के लिये उपयुक्त 'रिकार्ड' तैयार कराये जायं और वे प्रत्येक पंचायत के लिये सुलभ हों। ग्रामोफ़ोन के लिए सुन्दर, राष्ट्रीय भावों से ओतप्रोत गायनों के अतिरिक्त छोटे छोटे उपदेशात्मक भाषण, कथनोपकथन और नाटक के 'रिकार्ड' भी तैयार कराये जायं। इनमें स्वास्थ्य, सफ़ाई, भोजन, ग्रामोद्योग और सहकारिता आदि के महत्व पर चर्चा हो।

(३) सिनेमा

सिनेमा भी मनोरंजन का एक उत्तम साधन हो सकता है। परन्तु आजकल उत्तम कोटि के सुन्दर चित्र प्रस्तुत करनेवाली कंपनीयां बहुत ही कम हैं। अश्लील तथा गंदे गायनों एवं कुरुचि-पूर्ण अभिनय ही अधिकांश फ़िल्मों में होता है। इसका दर्शकों पर बहुतही अनिष्ट प्रभाव पड़ता है। अतः आवश्यकता है ऐसी फ़िल्म-कंपनियों की जो भारती जनता के ज्ञान-वर्द्धन, मनोरंजन तथा जनता में राष्ट्रीयता के भावों को जगाने वाली सुन्दर फ़िल्में (चित्र-पट) तैयार कर सकें।

स्वास्थ्य, सफ़ाई, उद्योग, सहकारिता, शिशु-पालन, भूगोल, इतिहास, विश्व के विविध राष्ट्रों के उत्थान-पतन तथा वैज्ञानिक आविष्कारों की कहा-नियां आदि संबंधी सुन्दर तथा शिक्षा-प्रद चित्रपट तैयार किये जायं। बालक

वालिकाओं के लिये उन्हें शिक्षा देने वाले चित्र-पट तैयार कराये जायं, जिससे वे उन्हें दिलचस्पी से देखें और उनका प्रभाव भी उत्तम रहे। चलते-फिरते सिनेमा (Touring Cinma) की व्यवस्था भी होनी चाहिए। ग्राम-पंचायतें इस दिशा में दिलचस्पी लें, तो इससे आर्थिक लाभ भी हो सकेगा। विवाहादि शुभ अवसरों पर इनका उपयोग किया जा सकता है।

(४) नृत्य

सभी देशों की स्त्रियों में नृत्य का प्रचार है। परन्तु इसमें सुधार की आवश्यकता है। ग्रामों में महिला-सभाओं को समय समय पर नृत्य का आयोजन करना चाहिये। नृत्य-पद्धति में सुधार भी किया जाय। नृत्य-शिक्षकों को आमंत्रित कर उनसे शिक्षा लेनी चाहिये।

(५) खेल और प्रतियोगिताएं

मनोरंजन के लिये विविध प्रकार के खेलों का भी आयोजन करना चाहिये। भारतीय प्राचीन खेलों का प्रचार इनके द्वारा किया जासकता है। बालचरों (Scouts) द्वारा भी खेलों का आयोजन किया जाय। कबड्डी, ऊंची कूद, लम्बी कूद, रस्साकशी आदि खेलों का प्रचार सुगमता से किया जा सकता है। फुटबाल, हाकी तथा क्रिकेट आदि खेलों की भी व्यवस्था करनी चाहिये।

(६) पर्वों तथा उत्सवों का आयोजन

हमारे पर्वों तथा त्योहारों में काफ़ी सुधार करने की आवश्यकता है। सदियों से हम इन त्योहारों को विकृत रूप में मनाते आरहे हैं और लोक इन्हें ही इनका वास्तविक रूप समझ बैठे हैं। रक्षाबंधन, दीपमालिका, विजया दशमी, होलिकोत्सव—ये हिन्दुओं के चार बड़े पर्व हैं। मुसलमान ईद, मुहर्रम तथा ईदुलफ़ित्तर पर्वों को विशेष रूप से मनाते हैं। ईसाई बड़े दिन और ईस्टर को मुख्य रूप से मनाते हैं।

हमारी सम्मति में इन पर्वों के सुधार के लिये प्रयत्न किया जाय और इनमें जो बुराइयां पैदा होगई हैं, उन्हें दूर करने का प्रयत्न किया जाय।

राष्ट्रीय उत्सवों के मनाने के लिये भी ग्राम-पंचायतों को व्यवस्था करनी

चाहिए। १५ अगस्त को प्रति वर्ष स्वाधीनता दिवस, २ अक्टूबर को गांधी-जयन्ती, ३० जनवरी को गांधी बलिदान दिवस, १ अगस्त को तिलक दिवस, महावीर जयन्ती, प्रताप जयन्ती, शिवाजी जयन्ती, सुभाष जयन्ती, राष्ट्रीय सप्ताह (अप्रैल में) आदि उत्सवों का आयोजन करना चाहिए जिनमें ग्राम के स्त्री-पुरुष सभी सम्मिलित हों।

(७) प्रदर्शिनी

ग्राम पंचायतों को मिल कर समय समय पर प्रदर्शिनियों का भी आयोजन करना चाहिए। इन प्रदर्शिनियों में कृषि, उद्योग, शिल्प-व्यवसाय आदि द्वारा प्रस्तुत वस्तुओं के प्रदर्शन के साथ आवश्यक एवं उपयोगी मशीनों का भी प्रदर्शन किया जाय, जिससे ग्रामवासी उनकी उपयोगिता से परिचित हो जायं।

प्रदर्शिनी में पशु विभाग भी होना चाहिए। अथवा पशु-प्रदर्शिनी का आयोजन पृथक् भी किया जा सकता है।

(८) प्रीति-भोज तथा गोष्ठियां

पर्व तथा उत्सव आदि अवसरों पर सार्वजनिक प्रीति भोजों की व्यवस्था की जाय जिनमें सभी हिन्दू जातियों के लोग मिल कर भोजन करें। यदि ऐसे भोजों में गैर-हिन्दू जातियों के लोकों को भी आमंत्रित किया जाय, तो और भी अच्छा हो। इस प्रकार के अन्तर्जातीय भोजों से परस्पर प्रेम की वृद्धि होगी और अस्पृश्यता की भावना भी मिट जायगी।



१३

* नागरिकों के मौलिक अधिकार

भारत के सात लाख ग्रामों के निवासी उसी प्रकार के नागरिक हैं, जिस प्रकार के भारत के नगरों के निवासी। जो लोग किसी भी स्वाधीन राज्य के सदस्य होते हैं और जिन्हें राज्य में समान राजनीतिक एवं सामाजिक अधिकार समान रूप से उपभोग करने का अधिकार होता है, वे राजनीति-विज्ञान अथवा नागरिक-शास्त्र के अनुसार 'नागरिक' (Citizens) कहलाते हैं। जो राज्य के सदस्य नहीं होते, वे 'विदेशी' (Foreigners) कहलाते हैं। उन्हें राज्य में राजनीतिक अधिकारों के भोग का अधिकार नहीं होता; परन्तु वे अन्तर्राष्ट्रीय विधान के अनुसार व्यवसाय-व्यापार आदि की सुविधाएँ प्राप्त कर सकते हैं।

---

* यहाँ 'नागरिक' शब्द के अन्तर्गत ग्रामवासी तथा नगरवासी सम्मिलित हैं। जो स्त्री-पुरुष भारतीय संघ (यूनियन) के नागरिक हैं, उन सब से यहां प्रयोजन है।

राज्य की उत्पत्ति नागरिकों अथवा प्रजा के हित के लिये ही हुई है। यदि हम इसे दूसरे शब्दों में कहें, तो यों कह सकते हैं कि समाज ने अपने सार्वजनिक हित एवं लोक-कल्याण के लिये ही राज्य का प्रादुर्भाव किया। अतः यह स्पष्ट है कि व्यक्तियों से पृथक राज्य-कल्पना संभव नहीं। जो राज्य व्यक्तियों के कल्याण एवं स्वाधीनता की अवहेलना कर प्रजा का दमन करे, उसका विनाश कर सुराज (Good Government) की स्थापना करना प्रजा का धर्म है। राज्य का निर्माण प्रजा ने किया है और यदि कोई राज्य प्रजा का हित-साधन नहीं करता, तो उसे जीवित रहने का भी कोई अधिकार नहीं। राज्य या सरकार ईश्वरीय नहीं हैं; वे मानव-कृत हैं।

आधुनिक युग में सभी लोकतंत्र-राज्यों में नागरिकों के मौलिक अधिकारों को उनके शासन-विधान में प्रथम स्थान दिया जाता है। भारत के सन् १९३५ के शासन-विधान में, जिसे ब्रिटिश पार्लमेंट ने बनाया था, इस प्रकार के मौलिक अधिकारों (Fundamental Rights) को कोई स्थान नहीं दिया गया।

भारत की विधान-परिषद (Constituent Assembly) ने हाल ही में शासन-विधान का जो 'ड्राफ्ट प्रकाशित किया है, उसके तीसरे भाग में नागरिकों के मौलिक अधिकारों को स्थान दिया गया है। ग्राम-वासी इन अधिकारों के महत्व को भलीभांति समझकर इनका समुचित आदर करें, इस दृष्टि से हम उन्हें यहां प्रस्तुत करते हैं।

१. राज्य की दृष्टि में सब नागरिक समान हैं

(१) राज्य किसी भी नागरिक के साथ केवल धर्म, जाति अथवा लिङ्ग के आधार पर भेद-भाव का व्यवहार नहीं करेगा।

विशेषतः उपर्युक्त आधारों पर किसी भी नागरिक पर निम्न लिखित अधिकारों के संबंध में कोई अयोग्यता का प्रतिबंध (रुकावट) नहीं लगायेगा:—

(क) दूकान, सार्वजनिक उपहार-गृह, होटल तथा मनोरंजन-

गृह जैसे सिनेमा, थियेटर, नाट्यशाला, सर्कस आदि के प्रयोग; या।

(ख) सार्वजनिक कूप, तालाब, सड़क, सार्वजनिक पार्क, बाग, आदि के उपभोग।

(२) स्त्रियों तथा बालकों के लिये विशेष व्यवस्था करने में राज्य पर कोई प्रतिबंध नहीं होगा। (धारा ९)

२. सार्वजनिक नौकरियों में समानता

(१) राज्य के अन्तर्गत नौकरी के संबंध में सभी नागरिकों को समान सुयोग मिलेंगे।

(२) कोई भी नागरिक केवल धर्म, जाति, लिङ्ग, वंश, जन्म-स्थान या इनमें से किसी एक के कारण अयोग्य न माना जायगा।

(३) इस धारा के अन्तर्गत किसी भी पिछड़ी जाति के लिये सरकारी नौकरियों में स्थान सुरक्षित रखने के लिये व्यवस्था करने में राज्य पर कोई प्रतिबंध नहीं होगा, यदि राज्य की सम्मति में उस जाति का पर्याप्त प्रतिनिधित्व न हो।

(४) इस धारा के अनुसार किसी विशेष धर्म की संस्था अथवा उसकी प्रबंध-समिति में किसी विशेष धर्म के व्यक्ति की नियुक्ति की व्यवस्था करने में कोई बाधा नहीं होगी। (धारा १०)

३. अस्पृश्यता (छूतछात) का विनाश

'अस्पृश्यता' अथवा छूतछात (Untouchability) को राज्य की ओर से उठा दिया गया है और उसे किसी भी रूप में मानना निषिद्ध है—क़ानून के विरुद्ध है। अस्पृश्यता से उत्पन्न किसी भी प्रतिबंध या अयोग्यता का जारी रखना क़ानून के अनुसार दण्डनीय होगा। (धारा ११)

(नोट: इसका स्पष्ट शब्दों में अर्थ यह है कि किसी भी व्यक्ति को 'अछूत' मानना और उसके साथ भेद-भाव का व्यवहार करना क़ानून के खिलाफ़ होगा और इसके लिये अपराधी को अदालत से सज़ा दी जायगी।)

४. नागरिक स्वाधीनताएँ

समस्त नागरिकों का कुछ मर्यादाओं के साथ निम्न प्रकार की नागरिक स्वाधीनताएँ होंगीः—

(१) भाषण तथा लेख की स्वतंत्रता।

(२) विना अस्त्र-शास्त्रों के साथ शान्तिपूर्वक संघठन।

(३) सभा, समिति या संघ का निर्माण।

(४) भारत में स्वतंत्रता के साथ आवागमन।

(५) भारत के किसी भी भाग में रहने की स्वतंत्रता।

(६) सम्पत्ति ख़रीदने, प्राप्त करने और बेच देने का अधिकार।

(७) किसी भी प्रकार के व्यापार, व्यवसाय अथवा उद्योग-धंदे के करने की स्वतंत्रता। (धारा १३)

५. क़ानून के अनुसार दण्ड-व्यवस्था

किसी भी नागरिक को क़ानून के विरुद्ध दण्ड नहीं दिया जायगा और न क़ानून में उललखित दण्ड से अधिक सज़ा ही दी जायगी।

किसी व्यक्ति को एक अपराध के लिए एक से अधिक वेर दण्ड नहीं दिया जायगा।

जिस व्यक्ति पर अभियोग लगाया जायगा, उसे उसकी साक्ष्य के लिए वाध्य नहीं किया जायगा।

६. जीवन व संपत्ति की रक्षा

किसी भी व्यक्ति को उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जायगा। प्रत्येक व्यक्ति को क़ानून की रक्षा समान रूप से प्राप्त होगी।

७. मुक्त—व्यापार

प्रत्येक व्यक्ति को भारत में व्यापार-वाणिज्य आदि की स्वतंत्रता होगी।

८. नारी-व्यापार तथा वेगार

स्त्री, बालिका, बालक आदि का क्रय-विक्रय तथा वेगार राज्य द्वारा क़ानून-विरुद्ध घोषित कर दी गई हैं।

९. , बालकों से काम न लिया जाय

१४ वर्ष से कम आयु के बालक को किसी कारखाने, खान अथवा किसी दूसरे जोखिम के कारोबार में काम पर न लगाया जायगा।

१०. धार्मिक अधिकार

(१) सार्वजनिक शान्ति व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य की मर्यादा का ध्यान रखते हुए प्रत्येक व्यक्ति को समान रुप से अपनी इच्छानुसार धर्म-पालन, पूजा-पाठ तथा प्रार्थना की स्वतंत्रता है।

व्याख्या—सिक्खों के लिए कृपाण धारण करना सिक्ख धर्म के अन्तर्गत है।

(२) इस धारा के अन्तर्गत राज्य को निम्न प्रकार के किसी भी क़ानून के बनाने में कोई बाधा नहीं होगी:—

(क) ऐसा कोई क़ानून जो आर्थिक, राजस्व, राजनीतिक तथा अन्य किसी प्रकार के सांसारिक कार्य पर प्रतिबंध लगाता हो, जिसका किसी धार्मिक परिपाटी से संबंध हो;

(ख) सामाजिक कल्याण, हिन्दू धार्मिक संस्थाओं के सुधार तथा हिन्दू मन्दिरों के खोलने के संबंध में क़ानून बनाना। (धारा १९)

(३) प्रत्येक धर्म के अनुयायियों को—

(क) धार्मिक तथा दातव्य संस्थाऐं स्थापित करने तथा उनका संचालन करने का अधिकार है;

(ख) अपने धार्मिक मामलों का प्रबंध।

(ग) चल अथवा अचल सम्पत्ति प्राप्त करना और उस पर स्वाम्य रखना।

(घ) ऐसी सम्पत्ति का नियमानुसार प्रबंध।

(४) धार्मिक शिक्षा

(क) किसी भी ऐसी संस्था में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायगी, जिसका राज्य की सहायता से संचालन होता है। परन्तु यदि

कोई संस्था राज्य के प्रबंध में हो और उसकी स्थापना ट्रस्ट ने की हो, तो उसके संबंध में यह नियम लागू नहीं होगा।

(ख) परन्तु कोई भी शिक्षा-संस्था, जो राज्य द्वारा स्वीकृत हो या जिसे राज्य से ग्रांट मिलती हो किसी भी व्यक्ति को धार्मिक शिक्षा ग्रहण करने के लिए बाध्य न करेगा अथवा किसी धार्मिक-पूजा में भाग लेने के लिए बाध्य न करेगा, जबतक कि वह स्वयं अनुमति न दे और यदि वह प्रौढ़ नहीं है, तो उसके संरक्षक अनुमति न दें।

(ग) किसी भी शिक्षा-संस्था में, किसी भी धार्मिक सम्प्रदाय या समुदाय के लोगों को धार्मिक शिक्षा देने की व्यवस्था से वंचित नहीं रखा जायगा, यदि अपनी संस्था के कार्य काल के बाद ऐसा किया जाय। (धारा २२)

११. अल्पमतों के अधिकारों की रक्षा

(१) भारत के किसी भी प्रदेश में रहने वाले नागरिकों की भाषा, लिपि या संस्कृति अपनी निजी है, तो उसकी रक्षा का उन्हें अधिकार होगा।

(२) यदि कोई अल्पमत धर्म, सम्प्रदाय या भाषा के आधार पर है, तो उसके किसी भी व्यक्ति को जो ऐसे अल्पमत का है, राज्य द्वारा संचालित किसी भी शिक्षा-संस्था में प्रवेश पाने से न रोका जायगा।

(३) अल्पमत के लोगों को अपनी-इच्छानुसार अपनी शिक्षा-संस्थाओं के प्रबंध का अधिकार होगा।

(४) राज्य की ओर से किसी भी अल्पमत की शिक्षा-संस्था को ग्रांट देने में भेदभाव नहीं किया जायगा।



सामाजिक स्वाधीनता

सामाजिक स्वाधीनता का प्रयोजन यह है कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति को अपने आर्थिक तथा सामाजिक विकास की पूर्ण स्वतंत्रता है। इसके अन्तर्गत निम्न लिखित अधिकार सम्मिलित हैं:—

(१) प्रत्येक व्यक्ति को स्वेच्छानुसार खान-पान का अधिकार है।

*(२) प्रत्येक व्यक्ति को स्वेच्छानुसार वस्त्रा भूषण धारण करनेका अधिकार है।

(३) प्रत्येक व्यक्ति को स्वेच्छानुसार भवन, कूप, धर्मशाला, आश्रम आदि बनाने का अधिकार है।

(४) प्रत्येक व्यक्ति को अपने समाज के नियमों के अनुसार विवाह आदि संस्कार करने का अधिकार है।

(५) प्रत्येक ग्रामवासी को ग्राम की आबादी में अपने मकान बनाने और उनके उपभोग का अधिकार है।

(६) प्रत्येक व्यक्ति को अपने समाज के सामाजिक कृत्यों, पर्वों, त्यौहारों आदि में भाग लेने का अधिकार है।

(७) प्रत्येक व्यक्ति को यातायात के सभी साधनों के प्रयोग का अधिकार है।

(८) प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।

(९) प्रत्येक व्यक्ति को न्यायालय से न्याय प्राप्ति का अधिकार है।



---

* सेना, स्वयं-सेवक दल, स्काउट-दल, ग्राम-रक्षक, गृह-रक्षक, नागरिक-सेना तथा किसी विशेष राजनीतिक-दल के सदस्यों को नियमानुसार विशेष पोशाक धारण करना अनिवार्य है।

नागरिकों के कर्त्तव्य

हमारे शासन–विधान ने हमारे लिये अपनी स्वाधीनता के उपभोग तथा व्यक्तित्व के विकास के लिये मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की है। परन्तु इन अधिकारों का उपभोग करने के हम अधिकारी उसी समय होसकते हैं जबकि हम उन अधिकारों से संबंधित कर्त्तव्यों का भी पालन उसी तत्परता से करें, जिस तत्परता स हम अपने अधिकारों के लिए प्रयत्न करते हैं। आज हमारे देश में, प्रत्येक क्षेत्र में, जो अव्यवस्था एवं दोष देख पड़ते हैं, उनका एक मुख्य कारण है नागरिकों में अधिकार–भावना की प्रवलता तथा कर्त्तव्य–भावना की न्यूनता।

यदि नागरिक अपने–अपने कर्त्तव्यों का उचित रीत्यानुसार पालन करने लगें, तो अधिकार उन्हें स्वतः ही प्राप्त होजायेंगे। परन्तु संसार में हम यह देखते हैं कि लोग अधिकारों के लिये बड़े संघर्ष करते हैं, आन्दोलन उठाते हैं; परन्तु कर्त्तव्यों का पालन ठीक ठीक न करने के कारण वे सब प्रयत्न और आन्दोलन विफल हो जाते हैं।

अतः हम इस अध्याय को समाप्त करने से पूर्व यहां नागरिकों के कर्त्तव्यों पर विचार कर लेना चाहते हैं। इस प्रश्न पर गंभीरता से विचार करने पर यह स्पष्ट होजायगा कि एक व्यक्ति का अधिकार ही दूसरे व्यक्ति का कर्त्तव्य है। यदि मैं अपनी अध्ययन-शाला में शान्ति पूर्वक अध्ययन करने का अधिकारी हूँ, तो मेरे पड़ौसियों का यह कर्तव्य है कि वे उस समय अपने संगीत की तान न छेड़ें या ग्रामोफ़ोन पर रिकार्ड न चढ़ावें। इसी प्रकार रात्री के १० बजे, जब लोग विश्राम करने जारहे हों, उस समय यदि मैं अपने ग्रामोफ़ोन को लेकर बैठूं, तो इसे कर्त्तव्य-हीनता ही कहा जायगा।

अधिकारों के संबंध में सुवर्ण नियम तो यह है:—

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

अर्थात् "जो कुछ तुम चाहते हो कि दूसरे लोगों को तुम्हारे प्रति करना चाहिए, वही तुम उनके साथ भी करो; क्यों कि क़ानून और धर्म यही आज्ञा देते हैं।" *

यदि लोग इस सुवर्ण नियम का अपने व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में सच्चाई के साथ पालन करें, तो समाज में अनेक संघर्ष, अव्यवस्था और विरोध के कारण दूर हो जायं और सच्चे बंधुत्व की प्रतिष्ठा हो सके।

अब हम, संक्षेप में, नागरिकों के कर्तव्ययों का उल्लेख करना चाहते हैं:—

(१) समस्त नागरिकों का यह कर्तव्य है कि वे राज्य के प्रति राजभक्त रहें और विधान तथा देश की रक्षा के लिए सदैव प्रस्तुत रहें।

---

* "All things, therefore, whatsoever ye would that men should do unto you, even so do ye also unto them: for this is the law of the Prophets."

Matt. VII 12.

(२) राज्य तथा संघ अथवा स्थानीय संस्था और ग्राम-पंचायत के क़ानूनों, नियमों तथा उपनियमों के अनुसार व्यवहार करना।

(३) पुलिस तथा सेना-विभागों में भरती होकर देश में शान्ति स्थापना तथा देश की बाहरी शत्रुओं से रक्षा करना।

(४) राज्य द्वारा जो कर-टैक्स आदि लगाये जायं, उन्हें यथा समय अदा कर देना।

(५) राज्य की रेल, मोटर-सर्विस, स्टीमर सर्विस अथवा अन्य किसी भी सर्विस में, जिसके लिए उचित फ़ीस, टिकट या किराया देना आवश्यक है, मुफ्त में लाभ उठाना समाज के प्रति घोर अपराध है।

(६) राज्य के विरुद्ध कोई षड्यंत्र या राजद्रोह नहीं रचना या करना चाहिए।

(७) भाषण की स्वतंत्रता को भोगते हुए कोई अपमानजनक भाषण न दे।

(८) लेख, पुस्तक आदि में किसी के धर्म के विरुद्ध कोई बात न लिखी जाय, जिससे परस्पर वैमनस्य पैदा हो।

(९) अपने भाषण, लेख या चित्र आदि में अश्लीलता तथा दुराचार की ओर प्रेरित करनेवाला कोई अंश न हो।

(१०) किसी भी व्यक्ति से उसकी इच्छा के विरुद्ध अथवा कम मजदूरी देकर कोई काम न लिया जाय।

(११) समाज में अंगहीन व्यक्तियों (Invalids) के लिए सार्वजनिक आश्रयस्थान बनाये जायं और उनके प्रति अपने कर्तव्य का पालन किया जाय।

(१२) प्रत्येक स्वास्थ्य व्यक्ति को परिश्रम करके धनोपार्जन कर अपना भरण–पोषण करना चाहिए; किसी भी व्यक्ति को किसी दूसरे के परिश्रम से अनुचित लाभ उठाकर धन की वृद्धि करना निश्चय ही समाज के प्रति अपराध है।

(१३) किसान ही–जो ज़मीन को स्वयं जोतते–बोते हैं–भूमि के असली मालिक हैं। अतः भूमि पर उन्हीं का स्वाम्य होना चाहिए। किसानों का यह कर्त्तव्य है कि वे समाज के लिए अधिक से अधिक उत्पादन करें।

(१४) मजदूरों–औद्योगिक मजदूरों का यह कर्तव्य है कि वे समाज के कल्याण एवं सार्वजनिक हित की दृष्टि से कार्य करते हुए अपनी सुविधाओं एवं अधिकारों की रक्षा के लिए आन्दोलन करते रहें।

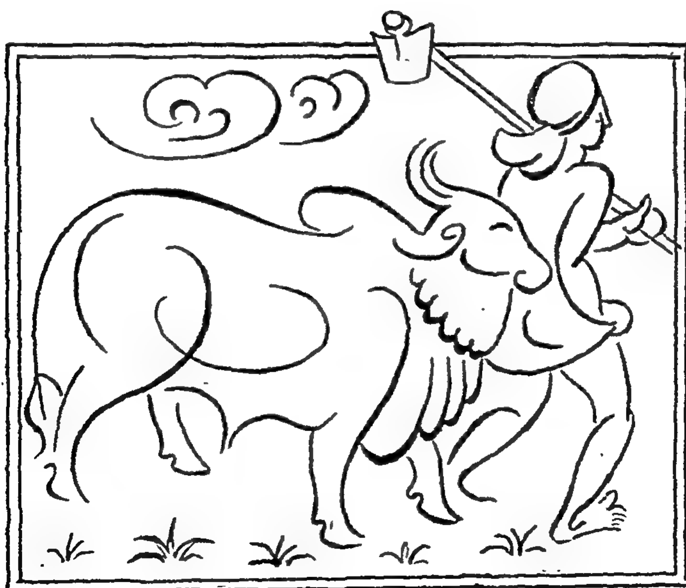
(१५) समस्त नागरिकों का, जिनमें व्यापारी–वर्ग, दूकानदार तथा सरकारी कर्मचारी भी सम्मिलित हैं, यह कर्तव्य है कि समाज के कल्याण के लिये रिश्वतखोरी, बेईमानी तथा चोर–बाज़ारी की प्रवृत्ति का सर्वथा त्याग कर दें। अन्त में इस पापाचार से किसी को भी लाभ नहीं होता और इसका व्यापक परिणाम यह होता है कि समूचा समाज ही दुःखी हो जाता है।

(१६) किसी नागरिक को किसी दूसरे की सम्पत्ति, धन, मकान, जायदाद आदि पर कोई न तो आघात पहुंचाना चाहिए और न उसके लिए कोई आकांक्षा ही करे।

(१७) नागरिकों को चाहिए कि वे संसार में शान्ति एवं विश्व-कल्याण के लिए कार्य करनेवाली संस्थाओं का समर्थन करें और जो पूंजीवादी देश की जनता को युद्ध के लिए, अपने स्वार्थ के लिये, प्रेरित करें—

उसकी उपेक्षा की जाय। अन्तर्राष्ट्रीयता एवं शान्तिवाद का समर्थन प्रत्येक नागरिक को करना चाहिए।

इति



हमारी ओर से—

ज्ञान की पावन धारा जनता में प्रवाहित करने की स्वीकृत प्रणालियों में पठन-पाठन सर्वाधिक प्रचलित और उपयुक्त शिक्षा-साधन है। इस साधनका उपयोग अब तक भारत में विदेशी शासन होने के कारण विकृत रूप में होता रहा है, पर अब हमें ऐसी सुविधायें प्राप्त होने जा रही हैं कि जिनका उपयोग करके हम बहुत शीघ्र आगे बढ़ सकते हैं।

हमारी संस्था अभी तक अंग्रेज़ी भाषा में ही प्रकाशन करती थी और हमें प्रसन्नता तथा सन्तोष है कि शिक्षित-वर्ग ने हमारे उद्योग की उचित सराहना की है और प्रोत्साहन प्रदान किया है। आज हमारे प्रकाशित अंग्रेज़ी साहित्य का देश-विदेश में उचित आदर और सम्मान है।

अब हम ने राष्ट्र भाषा हिन्दी में भी प्रकाशन आरम्भ कर दिया है और विश्वास है कि इस प्रयास में भी हमें समुचित सहयोग प्राप्त होगा जिससे हम अधिकाधिक सेवा करनेमें समर्थ हो सकेंगे।

विश्व में आदि काल से अब तक जो भी ज्ञान संचलित हुआ है उस पर बोधगम्य पुस्तकें प्रकाशित करना हमारा ध्येय है-तत्व ज्ञान और दर्शन, इतिहास और राजनीति, कला और विज्ञान आदि-मानव अनुभूति के सभी विषयों पर उपलब्ध विकसित और अविकासित विद्याओं को हम प्रकाश में लायेंगे। काव्य की सरसता, नाटक, उपन्यास और आख्यायिकाओं का मनोज्ञता; महापुरुषों से लेकर परम दरिद्री तक के सुख-दुखों की तरंग-मालाओं का दिग्दर्शन आप हमारे प्रकाशन में कर सकेंगे।

हमने निश्चय किया है कि ज्ञान के पिपासुओं को बाल-कथा कहानियों से लेकर श्रेष्ठतम श्रेणी का मनोविज्ञान बोधगम्य करा दें। सामान्य श्रेणी के पाठकों में भी उच्च जिज्ञासा भाव-जानकरी के लिये बेचैनी उत्पन्न कर दें और सधारण हिन्दी पढ़े लिखे पाठक को सभी श्रेणी के साहित्य का परिचय कर सकने योग्य बना दें।

इस योजना की पूर्ति के लिये हमने नीचे लिखे विषयों पर सुलभ-साध्य पुस्तकें प्रकाशित करने का आयोजन किया है:—

१-मनोविज्ञानात्मक बाल साहित्य।

२-राष्ट्र निर्माण-संबंधी साहित्य।

३-कला-विज्ञान और उद्योग-धन्धों संबंधी साहित्य।

४-निबन्धात्मक और विवेचनात्मक ग्रंथ।

५ कथात्मक साहित्य-नाटक, उपन्यास और कहानियां।

६-जीवन के गंभीर तत्वों का विवेचक साहित्य, और

७-इतिहास-संबंधी ग्रंथ। आदि आदि।

कई अधिकारी विद्वान हमारे लिये विभिन्न विषयों पर महत्वपूर्ण पुस्तकें लिख रहे हैं और उनको प्रकाशित करने की हमारे सम्मुख विशाल योजना है। आशा है कि शीघ्र ही हम कई उपयोगी और आवश्यक रचनायें वाचक-वृन्द की सेवा में उपस्थित कर सकेंगे। मात्र सहृदय पाठक महानुभावों का सहयोग अपेक्षित है और वह हमें अवश्य ही प्राप्त होगा-ऐसा विश्वास है।

आपके उचित परामर्श तथा निर्देशों की प्रतीक्षा है और हम सदा ही उनके स्वागत के लिये समुद्यत रहेंगे।

नालन्दा-प्रकाशन

तीसरा माला, धननूर बिल्डिङ्ग,

सर फ़ीरोज़शाह मेहता रोड, फ़ोर्ट, बम्बई १

हमारी कुछ पुस्तकों का परिचय आगे पढ़िये।

शाह आलम की आँखें

सुप्रसिद्ध विद्वान् और सिद्धहस्त लेखक

प्रोफ़ेसर श्री पंडित इन्द्र जी विद्यावाचस्पति लिखित

(एक ऐतिहासिक उपन्यास)

इसमें आप मुग़ल साम्राज्य के बुझते हुए चिराग़ के समय के रोमांचकारी चरित्र, वर्णन और विवरण पढ़िये।

यह प्रधानतः प्रसिद्ध इतिहासज्ञ **हैनरी जार्ज कील** द्वारा लिखित **मुग़ल एम्पायर** नामक पुस्तक के आधार पर लिखा गया है।

सजिल्द पुस्तक का मूल्य है ४) रु०

(शीघ्र ही मँगाईये)

भारत की भाषा

लेखक—**श्री स्वामीनाथ शर्मा** बी० ए०; टी० डी०; विशारद

राष्ट्रभाषा के महत्वपूर्ण प्रश्न पर उच्च कोटि की पुस्तक

भाषा की समस्या की अत्यन्त गवेषपूर्ण तथा युक्ति संगत व्याख्या और समाधान। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर इस विवाद-ग्रस्त विषय को सुलझाने का अतीव साधु एवम् संतोषजनक प्रयत्न।

मूल्य १) रु.

दो फूल

(कहानी संग्रह) (द्वितीय संस्करण)

लेखिका

श्रीमती सत्यवती जी मालिक

यह १९ कहानियों का संग्रह है। नारी हृदय का सार, मातृत्व की कसक और भावुकता की तूलिका से यह निर्मित हुई हैं।

कहानियां छोटी छोटी किन्तु गहरा असर करने वाली हैं। इन में जीवन का स्पंदन है और है ताज़गी भी। लेखनी में प्राण सञ्चारक शक्ति है। कोई एक भी शब्द फ़ालतू नहीं है।

यह रचनायें किसी भी साहित्य का गौरव हो सकती हैं। अनूठी हैं और कलापूर्ण हैं। यह कभी पुरानी पड़ने वाली नहीं हैं, इनके जीवन में पतझड़ नहीं आयेगा।

इतनी स्वाभाविक कहानियां हिन्दी में कम ही लिखी गई हैं। अवश्य ही पढ़िये। **(छप रही है)**

श्रीमती मालिक जी की कई दूसरी अनूठी, अनुपम और मौलिक रचनायें भी हम शीघ्र ही प्रकाशित करेंगे। **(प्रतीक्षा कीजिये)**

झुरमुट

(कहानी संग्रह)

शैली और प्रकार में नये सफल प्रयोग।

'**झुरमुट**' में आप पायेंगे जीवन का वह पहलू, जिस से आप की आंखें अनजान हैं। समाज का लड़खड़ाता महल, जिस की बुनियादें खोखली हो चुकी हैं, और अनुभव की वह तीखी घूँट जिसकी कड़वाहट का स्वाद आपने नहीं चखा।

विभिन्नता की दृष्टि से एक लेखनी द्वारा प्रसूत यह पहला संग्रह है। इस में केवल रस और रंगों की ही विभिन्नता नहीं वरन् भारत की विभिन्न संस्कृतियों का भी चित्रण है।

'**झुरमुट**' तो झुरमुट ही है–जहां प्रकृति का विलास होता है, जिस की छाया में केवल **मानव** देवता का निवास है।

इस में प्रेम की धूप छाँह खेलती है, आँसुओं की बौछारें पड़ती हैं, मुसकान की चांदनी छिटकती है और आहों–कराहों की लूएँ भी चलती हैं।

पढ़िये और **श्री. नलिनजी** की लेखनी की दाद दीजिये। **(छप रही है)**

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के सुप्रसिद्ध विद्वान

श्री रामनारायण यादवेन्दु, बी० ए०; एल-एल० बी०

की २ महत्वपूर्ण रचनायें—

१. दलित समाज की स्वाधीनता

इस नवीन मौलिक पुस्तक में विद्वान लेखक ने विश्व-वंद्य **महात्मा गांधी जी** के सर्व-प्रिय शोषित-पीड़ित दलित-समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं का राष्ट्रीय दृष्टिकोण से बहुत ही मार्मिक और सुन्दर विवेचन किया है। आपको '**भारत का दलित समाज**' पुस्तक पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन-प्रयाग द्वारा श्री राधामोहन गोकुल जी पुरस्कर हरिद्वार-सम्मेलन १९४३ में मिल चुका है।

यह पुस्तक प्रत्येक सामाजिक कार्यकर्त्ता, हरिजन-सेवक तथा दलित जातियों के लिये गीता की भांति संग्रह करने योग्य है।

कृपया अपनी प्रति शीघ्र मंगालें।

अन्यथा दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा-करनी पड़ेगी। (छप रही है)

२. समाजवाद: सिद्धान्त और प्रयोग

विद्वान लेखक ने इस ग्रन्थ में समाजवाद के सिद्धान्तों का विशद् विवेचन बड़े प्रामाणिक ढंग से किया है और इसके दूसरे खण्ड में सोवियट व्यवस्था, भारत में समाजवादी आन्दोलन, गांधीवाद और उसका भविष्य तथा कांग्रेस और समाजवाद पर विचारपूर्ण विवेचन किया है, जिससे एक सामान्य पाठक भी समाजवाद के आदर्शों तथा व्यवस्था को भली भांति समझ कर अपने देश और समाज के नव-निर्माण में सक्रिय योग दे सकेगा।

ऐसी उपयोगी और सुन्दर रचना की इस समय देश की जनता को बड़ी अवश्यकता थी। अधिकारी लेखक ने इस कमी को पूरा कर साहित्य और समाज की बड़ी सेवा की है।

कृपया अपनी प्रति शीघ्र मंगावें। (छप रही है)

मास्टर श्री ज़हूर बख़्श जी 'हिन्दी-कोविद'

के लेखन चातुर्य, सुलझी और मंझी हुई भाषा, प्रभावोत्पादक शैली, बाल मनोविज्ञान के अनुभव और हृदय स्पर्श करने हारी मर्मभेदी लेखनी का परिचय सामयिक साहित्य पढ़ने वालों को भली भांति है। आप पिछले पैंतीस वर्ष से हिन्दी की सेवा करते आ रहे हैं।

हम आप की कहानी संग्रह और बाल साहित्य तथा पाठ्य-क्रम की निम्न ४ अनूठी रचनायें शीघ्र ही प्रकाशित कर रहे हैं।

(प्रतीक्षा कीजिये)

शबनम

हिन्दी के वर्तमान कालीन् मुस्लिम सेवकों में आपका स्थान सर्व प्रथम है।

प्रस्तुत पुस्तक में आपकी ही चुनी हुई ग्यारह कहानियों का सङ्कलन किया गया है। ये कहानियाँ ज़हाँ एक ओर मानव-प्रकृति का सुरुचि-पूर्ण परिचय देती हैं, वहाँ दूसरी ओर कलात्मक पृष्ठ-भूमि पर भी अवलम्बित हैं।

कहानियों की भाषा बड़ी ही सुन्दर तथा टकसाली है और उसमें महाविरों की शोभा तो देखते ही बनती है। इतना ही नहीं, ये कहानियां रोचक भी विशेष हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि जहाँ आप एक बार पुस्तक हाथ में लेंगे, समाप्त किए बिना कदापि न छोड़ सकेंगे। (छप रही है)

गुलामी पाप है

इसमें एक पवित्र उद्देश्य को सामने रखते हुए, एक नये ही ढङ्ग से कुछ कहानियाँ लिखी गई हैं।

हमारे देशमें हिन्दू मुस्लिम-कलह का एक कारण यह भी है कि दोनों ने आजतक एक दूसरे के गुणों को परखने की चेष्टा नहीं की है। यह पुस्तक लिखते समय लेखक महोदय का यही आशय रहा है कि हिन्दू भाई अतीत काल के मुस्लिम महापुरुषों से कुछ परिचित हो जाय और मुस्लिम भाई अपने पूर्वजों से कुछ प्राप्त कर सकें। बस, इसी दृष्टि-कोण से उन्होंने यह एक ऐतिहासिक गुल-दस्ता प्रस्तुत कर दिया है, जिसके प्रत्येक फूल में कुछ-न कुछ सौन्दर्य, सुगन्ध और आकर्षण है। (छप रही है)

मात्रा-बोध

आपने कहानियों की यह पुस्तक बहुत ही सरल शब्दों के योग से केवल अक्षर-ज्ञान रखने वाले छोटे-छोटे बच्चों के लिये लिखी है। इसकी सभी कहानियाँ मात्राओं पर अवलम्बित हैं। फल यह होता है कि जहाँ प्रत्येक कहानी का आकर्षण बच्चों के मन में पढ़ने की गुदगुदी उत्पन्न करता है, वहाँ उनको क्रमशः मात्राओं का सुपुष्ट बोध भी कराता जाता है। सचमुच बच्चों को मात्राओं का रुचिकारक ज्ञान देने के लिये यह एक अपूर्व पुस्तक है। यदि यह कहा जाय कि हिन्दी में इस विषय की ऐसी पुस्तक अब तक प्रकाशित नहीं हुई, तो कोई अत्युक्ति न होगी।

प्रत्येक कहानी के साथ आवश्यक चित्र देने से पुस्तक की उपयोगिता में और भी वृद्धि हो गई है। (छप रही है)

कहानी-बोध

इस पुस्तक में पहली कक्षा-योग्य बालकों के लिये छोटी छोटी अत्यन्त सरल, रोचक और शिक्षा प्रद पच्चीस कहानियाँ एक नवीन ढङ्ग से लिखी गई हैं।

यदि बालक कहानी सीख ले और शब्द-भण्डार की दृष्टि से उसका ज्ञान अपूर्ण रहे, तो यह शिक्षण-शास्त्र की दृष्टि से एक बड़ी त्रुटि है। इसी त्रुटि को दूर करने के लिये लेखक महोदय ने इन कहानियों की रचना नित्य बोल-चाल में आनेवाले **केवल चार सौ सरल शब्दों** के योग से की है, घोर परिश्रम के साथ यथा-स्थान प्रत्येक शब्द की कम-से-कम पाँच बार पुनरावृत्ति की है और पुस्तकान्त में व्यवहृत शब्दों की सूचि भी दे दी है। परिणामतः इस पुस्तक के पाठ से जहाँ बालक नई-नई कहानियां सीखते हैं, वहाँ उनका भाषा-विषयक ज्ञान भी पुष्ट होता है।

प्रत्येक कहानी के साथ आवश्यक चित्र देने से पुस्तक और भी आकर्षक बन गई है।

पढ़ने-लिखने की अभिलाषा रखने वाले वयस्क जन भी इन दोनों पुस्तकों से भर-पूर लाभ उठा सकते हैं। (छप रही है)

बाल स्वास्थ्य-बोध

स्वतंत्र देश में स्वस्थ और स्वच्छ बालक ऐसे ही प्रतीत होते हैं, जैसे प्रकृति के उद्यान में खिले हुए आकर्षक और सुरभित पुष्प। अब हमारा देश भी स्वतंत्र हो चुका है। अतएव इस बात की आवश्यकता है कि हमारे बालक भी स्वस्थ एवं स्वच्छ रहना सीखें और अपने देश को हरी-भरी वाटिका के समान मोहक बना दें। परंतु हमारी राष्ट्र-भाषा हिन्दी में अब तक ऐसी पुस्तक का अभाव था, जो बालकों को शरीर और वस्त्र-सम्बन्धी शिक्षा की यथेष्ट शिक्षा दे सकती।

इसी अभाव की पूर्ति करने के लिये **कुमारी मुबारक जहाँ** ने इस पुस्तक की रचना की है। यह पुस्तक पहली कक्षा से लेकर चौथी कक्षा तक के बालकों के लिये चार भागों में विभक्त है। इसके प्रत्येक भाग में प्रत्येक कक्षा के बालकों की योग्यतानुसार शारीरिक और वस्त्र विषयक स्वच्छता रखने के लिये बड़ी सरल तथा सुन्दर भाषा में शिक्षा का समावेश किया गया है। एतदर्थ कहानियों, संवादों और कविताओं की अवतारणा इतने मनोरंजक ढंग से की गई है कि बालक पुस्तक पाते ही पढ़ने के लिये व्यग्र हो उठेंगे।

सचमुच बड़ी उपयोगी और पाठशालाओं में पढ़ाई जाने योग्य पुस्तक है। अवश्य खरीदिए, बालकों के हाथ में दीजिए और उनका जीवन स्वस्थ्य, सुखी तथा दीर्घ-जीवी बनाईए।

प्रथम भाग पहली कक्षा के लिये। द्वितीय भाग दूसरी कक्षा के लिये। तृतीय भाग तीसरी कक्षा के लिये और चतुर्थ भाग चौथी कक्षा के लिये।

पुस्तक आवश्यक चित्रों से परिपूर्ण है और बालकों तथा बालिकाओं के लिये समान रूपसे उपयोगी है। (छप रही है)

दुग्ध-विज्ञान

दूध मृत्यु लोक का अमृत है, पर इस के विषय में आप कितना जानते हैं ?

यदि दूध के विषय में आप सब कुछ जानना चाहते हों तो

श्री गंगा प्रसाद जी गौड़ 'नाहर' तत्वचिकित्सक लिखित

दुग्ध-विज्ञान

पुस्तक पढ़िये।

इस में आपको ऐसी जानकारी प्राप्त होगी जिसको आपने न किसी से सुना होगा और न किसी पुस्तक में पढ़ा ही होगा। जो कुछ लिखा गया है सब स्वानुभवों पर आधारित है और लेखक के २५ वर्षों के अन्वेषणों के फल स्वरूप है।

पुस्तक अपने ढङ्ग की अनोखी है और वैज्ञानिक है।

अवश्य ही पढ़िये (छप रही है)

सूचना—

अन्य सुप्रसिद्ध, अधिकारी, मनःस्वी और विद्वान

लेखक महानुभावों की

कई महत्वपूर्ण, उपयोगी और मौलिक रचनायें प्रेस में जा रही हैं, जो शीघ्र ही प्रकाशित होंगी।

(प्रतीक्षा कीजिये)

कुमारी कंचनलता जी सब्बरवाल,

एम् ए.; एल–टी., शास्त्री; साहित्य रत्न;

का शुभनाम और प्रशंसा आपने सुना है ?

कुमारी प्रिन्सिपल महोदया न केवल कई विषयों की एम. ए. ही हैं वरन् बड़ी सिद्धहस्त, कुशल और कलाकार लेखिका भी हैं। आप कहानी, उपन्यास, नाटक, विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र आदि सभी पर साधिकार और निपुणता के साथ लिखती हैं। आप की कई रचनायें साहित्य में अच्छा स्थान पाये हुये हैं।

हम भी, शीघ्र ही, आप के कई उपन्यास, कहानी संग्रह, अर्थशास्त्र तथा मनोवैज्ञानिक रचनायें प्रकाशित कर रहे हैं। (**प्रतीक्षा कीजिये**)

? ? ?

उर्दू साहित्य की प्रसिद्ध लेखिका और सम्पादिका ख्यानातमा

श्रीमती 'सहर' महोदया

की मार्मिक लेखनी से निकले हुये अफ़साने पढ़ने वाले ही उनकी मौलिकता, रचना कौशल्य और ज़बाँदानी की दाद दे सकते हैं।

आपने हमारी प्रेरणा से राष्ट्रभाषा हिन्दी में भी लिखना आरम्भ कर दिया है और आपके चुने हुये अफ़सानों का मजमुआ—कहानी संग्रह की प्रथम भेंट सुविज्ञ पाठकों के सम्मुख रखने का श्रेय **नालन्दा-प्रकाशन** को प्राप्त हुआ है।

यह चीज़ हिन्दी में अनुपम होगी।

इस संग्रह में आप को मनुष्य जीवन का वास्तविक चित्र देखने को मिलेगा। लेखिका का हृदय जीवन के दुःख सागर की तरंगों का अनुभव करता है। एतदर्थ आप की कहानियां पूर्ण रूप से अनुभवसिद्ध हैं। इन में आप केवल वेदना और चिंता ही नहीं वरन् वह शक्ति भी अनुभव करेंगे जो चित्त की उदासीनता और आत्मा की अशांति को क्षणभर में नष्ट कर सकती है। लेखिका की गहरी दृष्टि जीवन के अन्तिम छोर तक जाती है और साथ ही अपने पाठकों को भी ले जाती है।

अवश्य ही पढ़िये। (**छप रही है**)

इनके अतिरिक्त—

—साहित्याचार्य, प्रोफ़ेसर श्री पंडित सीतारामजी चतुर्वेदी एम०ए०; एल टी०; एल-एल० बी०;

—प्रोफ़ेसर सु श्री उमा कुमारी जी मांडवल ए०ए०; एल- टी०;

—प्रोफ़ेसर सु श्री हेमन्त कुमारी देवी जी एम०ए०; एल-टी०; साहित्य रत्न ;

—प्रिन्सिपल श्री कृष्णदेव प्रसाद जी गौड़ एम०ए०; एल-टी०; 'बेढब' बनरसी जी;

—प्रोफ़ेसर डाक्टर श्री आर० पी० बहादुर जी एम०ए; पी-एच० डी०; डी० लिट;

—प्रोफ़ेसर श्री नित्यानन्द जी आयुर्वेचार्य;

—प्रोफ़ेसर श्री पंडित भगवद्‌दत्त जी बी० ए०; वैदिक रिसर्च स्कालर;

—प्रोफ़ेसर श्री पंडित जगदीश चन्द्र जी शास्त्री, एम्० ए०;

—प्रोफ़ेसर डाक्टर श्री जे० सी० जैन जी एम्० ए०; पी-एच०डी०;

—प्रोफ़ेसर श्री प्रभाकर माचवे जी एम०ए०; साहित्यरत्न;

—श्री रांगेय राघवजी ;

—श्री पीर मुहम्मद जी 'मूनस' आदि आदि

कई सुविख्यात और अधिकारी विद्वान तथा विदुषी देवियां हमारे लिए महत्वपूर्ण रचनायें तैयार कर रही हैं जिन्हें हम यथा संभव शीघ्र ही प्रकाशित करेंगे।

प्रकाशन से पूर्व ग्राहक श्रेणी में नाम लिखाने वाले महानुभावों को हम भर-पूर सुविधायें-रियायतें-देने की योजना पर भी विचार कर रहे हैं।

आप भी, शीघ्र ही, ग्राहकों में नाम लिखालें। इस से हमें और आप-दोनों को ही सुविधा होगी तथा लाभ होगा।

नालन्दा-प्रकाशन, पोस्ट बॉक्स १३५२, मुम्बई नं० १

THE TEACHINC OF HINDI

"Mr. Sharma's brochure on the Teaching of Hindi should be very welcome in these "renaissance" days. If its size is small, this is no indication of the quality of its contents. The author has put into it the valuable results of his wide personal experience; and he has not lost view of the latest theoretical advances in language teaching. The discriminating Hindi teacher will find here valuable advice."

R. CONESA S.J., M.A., Ph.D.,
DIRECTOR,
T.D. Dept., St. Xavier's College,
BOMBAY.

LINGUA INDIANA

A classic on the burning topic of the day

by

Swaminath Sharma, B.A., T.D., Visharad.

A most comprehensive survey of the language—question from all angles against appropriate historical back ground as has not been attempted before.

A very rational and judicious approach of this vexatious problem, supported by faithful details and convincing arguments. Re. 1/8

Our Some English Publications

HIMALAYAS—ABODE OF LIGHT

By Prof. Nicholas Roerich: With 25 illustrations from his paintings of Himalayas—two in colour. This fascinating and unusual book will have an irresistible appeal to all who have visited Himalayas in person or imagination. Rs. 15/-

EMINENT INDIANS

By D. B. Dhanapala: Lively and penetrating character sketches of Prominent citizens of India in different walks of life. "The Hindu"—Madras in a review states: "Mr. Dhanapala has a gift for discription which makes these essays of permanent interestt."

CONTEMPORARY INDIAN PAINTERS

Bq G. Venkatachalam: With 15 plates, two in colour. The only book dealing with the fifteen foremost artists of Indian renaissance. Rs. 8/4

DANCE IN INDIA

By G. Venkatachalam: Nearly 50 illustrations, two in colour. Vividly written sketches of foremost dancers of India and technique of various types of dances. Rs. 9/-

AMONG THE GREAT

By Dilip Kumar Roy: Conversations with Romain Rolland, Mahatma Gandhi Bertrand Russell, Rabindranath Tagore, Shri. Aurobindo. Introduction by Shri. Radhakrishnan. (Second Edition). Rs. 8/4

THE SUBHAS I KNEW

By Dilip Kumar Roy: The best and intimate picture of Subhas's mind and work with many photographs. Crown 8vo. pages 224. Rs. 5/4

THE FALL OF MEWAR (Translation of 'Mewar Patan' by Dwijendralal Roy).

By Dilip Kumar Roy and Harindranath Chattopadhyaya. Title page in two colours. Rs. 3/12

WEST OF SUEZ

By S. Natarajan. Editor: "Free Press Journal". Interesting travel book. Pages 306. Demy 8vo. Rs. 4/8

MOODS OF A MAHATMA

By Dhiren Gandhi. Portfolio of Portrait-Sketches of Gandhiji. Beautifully printed at the "Times of India" Press. Introduction by G. Venkatachalam. Rs. 3/-

नालन्दा-प्रकाशन

बम्बई की नालन्दा-प्रकाशन संस्था एक अत्यन्त ही उपयोगी और नामांकित संस्था है। गत दो-तीन वर्षों में ही इस संस्थाने अंग्रेज़ी भाषा में अत्यन्त महत्वपूर्ण, गम्भीर और उच्च कोटि का साहित्य प्रकाशित कर के देश और विदेश में अच्छी ख्याति प्राप्त करली है।

यह जानकर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई कि अब इस संस्थाने राष्ट्र-भाषा हिन्दी में भी प्रकाशन-कार्य आरम्भ कर दिया है। और इस कार्य को आरम्भ करने, संचालन करने तथा अग्रसर करने का श्रेय हिन्दी-साहित्य के तथा मध्य-भारत के चिरपरिचित श्री. द्वारिकाप्रसाद सेवक को है। सेवकजी ने इन्दौर में सरस्वती-सदन द्वारा उच्च कोटि का साहित्य प्रकाशित किया था। आप कई प्रसिद्ध-पत्रों के सम्पादक तथा संचालक भी रह चुके हैं। इस क्षेत्रमें आपका अनुभव भी बहुत पुराना है। हमें पूर्ण विश्वास है कि आपके सहयोग से नालन्दा-प्रकाशन द्वारा देश, समाज तथा राष्ट्र-भाषा का महत्-उपकार होगा।

हमें ज्ञात हुआ है कि विभिन्न-विषयों पर १४-१५ अत्यंत ही उपयोगी, महत्वपूर्ण, मौलिक और उच्च-कोटि की सामयिक हिन्दी पुस्तकें इस संस्था-द्वारा शीघ्र ही प्रकाशित होंगी।

"वीणा" मई '४८

विशेष दृष्टव्य—

इस सूची पत्र में जिन पुस्तकों के प्रेस में होने की सूचना है उन में से कुछ जुलाई '४८ में छप जायंगी, कुछ अगस्त में और शेप सितम्बर '४८ में प्रकाशित होजायंगी।

जो महानुभाव मात्र १) रु० का मनीआर्डर भेजकर अभी से ग्राहकों में नाम लिखा लेंगे उनको हम कमीशनकी छूट देंगे और डाक व्यय तथा पेकिंग आदि में भी किफ़ायत करेंगे। किन्तु शर्त यह ही है कि १) रु० आप के पूरे नाम और पते सहित हमारे पास शीघ्र ही आजाना चाहिये।

आवश्यक नहीं है कि आप सभी पुस्तकें मंगावें, जो जो आप पसंद करें और जो आपको रूचिकर हों, उनके ही ग्राहकों में नाम लिखाईये।

पुस्तक विक्रेताओं को भी जो अधिक संख्या में आर्डर देंगे, हम पर्याप्त सुविधायें देने को तय्यार हैं।

आर्डर भेजिये। व्यवहार सब नक़द ही होगा। बिल्टी बेंक अथवा वी० पी० द्वारा भेजी जा सकती है। किन्तु चौथायी मूल्य पेशगी आना आवश्यक है।

भवदीय—

व्यवस्थापक

५ जुलाई '४८

नालन्दा-प्रकाशन

तीसरा माला, धननूर बिल्डिङ्ग

सर फ़ीरोज़शाह मेहता रोड,

फ़ोर्ट-बम्बई, नं० १

हमारा समाज

लेखक

इस विषय के सुप्रसिद्ध मनःस्वी और सिद्ध हस्त तथा अनुभवी विद्वान

श्री. सन्तरामजी बी. ए., सम्पादक "क्रान्ति"

भूमिका लेखक

मानवीय डाक्टर **श्री. भीमरावजी अम्बेडकर** एम. ए., पी-एच. डी.

क़ानून-मन्त्री भारत-गवर्नमेण्ट

पुस्तक लेखक के २५ वर्षों के अध्ययन, मनन और अनुभव का निचोड़ है।

इस में बताया गया है कि जात-पाँत कैसे बनी। आरम्भ में इसका क्या रूप था, इससे क्या क्या हानियां हुई, बुद्ध आदि महात्माओं ने इसे दूर करने का कैसा यत्न किया, स्मृतियों और शास्त्रों की क्या आज्ञा है, जिन हिन्दुओं का ९ वीं शताब्दी में भी काबुल तक में राज्य था उनको आज पञ्जाब से भी क्यों निकलना पड़ा, सच्चा सनातन धर्म क्या है, इत्यादि।

इस में बहुतसी ऐतिहासिक घटनायें और वैज्ञानिक खोजों को संग्रहीत किया गया है। इसे एक बार ध्यानपूर्वक पढ़ लेने वाला प्रत्येक व्यक्ति **जाति भेद** से अवश्य ही घृणा करने लगेगा।

इस विनाशकारी भेद भाव को समूल नष्ट करने की जितनी आवश्यकता इस समय है—उतनी पहिले कभी नहीं थी। **पाकिस्तान और हिंदुस्थान**

का बटवारा अवश्य ही हो गया है—पर इससे ख़तरा दूर नहीं हुआ। इ समय जो मुसलमान भारत में रह गये हैं—यदि उनको प्रेमपूर्वक अप समाज में पचाने का यत्न न हुआ तो कालान्तर में उनका '**फ़िफ़्थ काल मिस्ट**' या **देशद्रोही** बनना अवश्यम्भावी है। तब बाहर से पाकिस्ता और भीतर से यह लोक भारत का नाकों दम करने लगेंगे। परन्तु ज हिन्दू दूसरे हिन्दू को भी अपने में नहीं पचा सकता, वह मुसलमान को कै पचा सकेगा ? इस लिये मुसलमानों और हिन्दूओं को मिलकर एक संगठि राष्ट्र बनाने के लिये जाति भेद को शीघ्र से शीघ्र मिटा देना आवश्यक नहीं वरन् अनिवार्य भी है। जाति भेद के रहते '**अच्छूतोद्धार**' औ '**शुद्धि**' कभी भी सफल नहीं हो सकती हैं।

एतदर्थ आप से साग्रह निवेदन है कि आप इस पुस्तक के प्रचा में हमें पूरी पूरी सहायता प्रदान करें। आप जहाँ स्वयम् एक प्रति ख़रीद वहां अपने मित्रों को भी इसे ख़रीद लेने की प्रेरणा करें।

यदि कई मित्र मिल कर एक ही पार्सल से इकट्ठी ही कापियाँ मंगा येंगे तो डाक व्यय आदि में बड़ी किफ़ायत होगी।

पुस्तक में कई आकर्षक और प्रभावपूर्ण चित्र भी हैं।

(छप रही है

सूचना—

अन्य सुप्रसिद्ध, अधिकारी, मनःस्वी और विद्वान

लेखक महानुभावों की

कई महत्वपूर्ण, उपयोगी और मौलिक रचनायें प्रेस में जा रही हैं जो शीघ्र ही प्रकाशित होंगी।

(प्रतीक्षा कीजिये

नालन्दा—प्रकाशन, पोस्ट बॉक्स १५३, बम्बई १